शष्टिम शंकराचार्य
भावा, शैली
उपन्यास व अन्य लेखन
भावा - शैली

मानव विचारशील प्राणी है। वह दूसरे के साथ अपने दिक्षण का बादाम-पुदान करना चाहता है। सार्वजनिक भी मानव है। जिसका सहज व्यापार भावों की प्रकटीति है। सार्वजनिक कुं का प्रतिनिधि होता है। परिणामतः उसकी रचना में उल्लक्कुण्ड्र हुए। वह उपन्यास के लेखन का माध्यम है। उसके अनुमूलकों का लेखकी या वाणी के माध्यम से शब्दों हारा अर्थ की अभिव्यक्ति के बादम पुक्त करना ही भावा है। केवल पुक्त भावा ही किसी रचना के रचनात्मक प्रदान करने में सहायक सहारित होती है। इसलिए यह रचना उचित ही है कि भावा ही निर्णय अपने काबू या रचना का साधृय है। किसी महत्वपूर्ण काबू या माध्यम के लिए पुक्त भावा में कुछ विशिष्टता मुख्त होती है। उसकी उपयोगिता शब्द सौदर्य पर ही अधिक रहती है। शब्दसौदर्य के साहित्य को ही भावा और भाव का सम्बन्ध स्थापित जाता है। इसलिए भावा में ही वह उचित है जो भावों का भारम्भ करती है। भावों की उचित अभिव्यक्ति में ही भावा की लक्ष्यता है। इस पुकार शब्दशालिक, व्याकरण, छन्द, शास्त्रीय शब्द शील की भावा के कल्लीरण स्थापित दिया जा सकता है। शीलाशालिक या धार्मिकता जिस पुकार भावा को सौदर्य-पुदान करने में सहाय्य है उसी पुकार उसमें विकसित है और मूर्तिसंपत्ति का स्थापित भी माना जाता है। साहित्य शब्दों की सैलानों से जिन भावों को पुक्त करना योग्य होता है उन्हें रचनाकार अपनी कल्पना के रूप में पुक्त करता है। सभी रचनाकार अपने शब्दों से शुरू हो। शुमंदर किन्तु भाव का बलत्र होता है निराकरण है। साहित्य शब्दों की मूर्तिसंपत्ति भावा की विचारशीलता के प्रति ही अधिक है।

भावा सर्व भावों का सम्बन्ध पुक्त एवं सूक्ष्मता तथा शरीर और बाल्यकों व सम्बन्ध है। यद्यपि नाटक की वात्तमा विचार और भावाकार है तथापि जब तक वहत्रात्मा भावाकारी शरीर में नहीं दिखाई पड़ती है तब तक मनुष्य के लिए अग्रीत होती है। दूसरी ओर यह भाव भी स्पष्ट है कि
भाव भाव के बिना युक्तियाँ धारण नहीं कर सकते, इसलिए भावात्मक शरीर की पुर्वपूर्व होती ही के भाव को अपनी अनुगमनी बना देते हैं तभी वाच्य का समान्दर भी पूकता होता है। भाव के भावों से पृथ्वी विच्छेद करने पर वाच्य का समान्दर समाप्त हो जाता है।

भाव का सहायक, कुमार और सरस बनाने के लिए ऐसी शब्दाकलियों का बना होना चाहिए जिसके उच्चारणात्मक से अर्थ सम्बन्ध हो जाए, तभी लिए नाटककार या कवि को स, अल्कावर, ध्वनि, छन्द, वृति आदि का जान होना आवश्यक है। गहराविमोचनों की सरलभाषा में व्यक्त करना ही अच्छी भावा का प्रमाण है। अंगभिर और समानसे पर्वतकार के जाल में पिकर भावा बोल-जिल और दृश्यता हो जाती है। इसलिए भावा की भावों के अनुसार और पावन के जन्म नामाहिता की आवश्यक समान-कीयनिक भाषा में भावा का महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। तथा उपन्यास-कार या कहानीकार अपनी बात को स्वयं भ्रमण कर फेला है वह नाटककार को पताकों के माध्यम से ही कुछ कहने का अवसर मिलता है। इसलिए पावन के अनुसार भावा का होना आवश्यक है। भावा की दृष्टि से जहाँ नाटककार को पताकों का ध्यान द्वारा होता है, वहाँ उसे वह समाज भी दृष्टि में सकता होता है जिसके लिए वह नाटक की रचना करता है। भावा की दृष्टि से उस नाटक समाज में अपना स्थान नहीं बना सकता जो वह नाटक अपने समाज के समाज का पुर्विनिर्देश भी नहीं रख सकता। नाटककार को उसके अतिरिक्त वह भी क्षण स्थान होता है कि पाणिन्दिक प्रवेश भी कर सकता। नाटककार को इसके अतिरिक्त वह भी व्यक्ति रहता है कि नाटक का सम्बन्धित शिक्षा और विशिष्टता उसके तदनुसार भी समाप्त कर देती है। इसलिए सर्वसम्मानी भावा ही नाटक की शौभा और महर्षी का बदला है।

नाटककार को वह भी क्षण स्थान होता है कि वह भावा के व्याख्या में आकर अपने वातावरण का मार्ग से भटक तो नहीं माना। अल्कावर शौभा-शास्त्र होते हैं, इसलिए नाटककार के नाटक में उन्हें शास्त्रमभाव स्थान देता है। नाटककार इस मौह को सर्वथा स्वागत नहीं सकता। अल्कावर यदि
स्वाभाविक लग से शरू है तो वे शोषण के कारण बनते हैं। इसलिए भावा व भावों पर अपेक्षा भावना में ढ़ेर नहीं लगते। इसके अतिरिक्त नाटककार को भावा की दृष्टि से देख-दाख का भी क्रियान्वयन रखना होता है। जिस दृष्टि से कथानक का सम्बन्ध है उसके तो भावा का सम्बन्ध होना ही चाहिए साथ ही उसका लग ऐसा हो जो तब तक के समान अव भी आदर्शान्वयन कर सके। सफल नाटक का सम्बन्ध किसी एक दृष्टि या क्षेत्र से नहीं होता, उसे तो सार्थक-भौतिक रूप में होना पड़ता है और उसे यह लगे जहाँ भावा भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। इसलिए भावा का लग सार्थक रूप में होना चाहिए।

इस प्रश्नान्वयन में जब हम दीक्षित जो के नाटकों को भावा की दृष्टि से देखते हैं तो हम उनकी भावा में मन्द-शान्त मन्दाकिनी का पुछात रहते हैं। उनके नाटकों में संस्कृत, प्राकृत, हिंदी और नेपाली का गुंडा लगा है।

यदि दीक्षित जी अपने सभ्य है या घर-माता प्रणियों की कोठी में निःसे जाते हैं तथापि उनकी नैनों से लाशिराम का कोई भी दृष्टि खोलना नहीं रहा। नाटक क्षेत्र में उन्होंने भावा को सरल लग दिया है। जिसके कारण कोई अन्यसंदर्भ-विवरण उनके नाटकों में स्थानान्तरित कर लेता है। सरल दृष्टि व भावते के कठिन पुनर्वास का सरलता से कर्ना करता उनकी अपनी निष्पादनता है। विशिष्ट पारंपरी की भावा संस्कृत व अन्य संस्कारों की प्राकृत, हिंदी व कैलाश इनके नाटकों में पारंपरिक हैं। भावा में अन्यक जैसे अन्यक जिन गुणों का समावेश व हो सकता है उनकी अभिज्ञता के अन्य संविधान भर हम उनके नाटकों में पारंपरिक हैं।

गोरखनाथ विषेशक उनकी भावा की सुन्दरता शह निस्त्र उदाहरणों में देख सकते हैं, जैसे-

सरलता - दीक्षित जी ने भावा का वहना सरलता स्पष्ट स्पष्ट है कि संस्कृत का अर्थ भी उनके नाटकों की भावा को अनावश्यक समस्त प्रकट है। वहाँ हम उनके नाटकों में प्रयुक्त भावांशों के निदानसाधन उदाहरण दे रहे हैं।

महाराज श्रीराम महापूर्वित अहं काव्यायकः वैज्ञानिकिः ते केशरि भूताज्ञायते त्रियोगिनां श्रृण्यारम्भां स्वरुपान्तः काव्यविशेषां श्रीरामविवरणार्थाम् सर्वाः संचारिकायम्। करतारणानां मूर्तिवेदी पुष्पकम् श्रीरामानं तं विवेदी संचारिकायम्। अवः परं भक्तरुरूपः
न को जिता उपलब्ध हो।

तर्क दस्तूर व्याख्यात्मकरणो व्याख्या अन्तःपूर्ण: कहते हैं: पूर्व-उत्तरमा व्याख्या हो मूलके विश्लेषणात्मक: परमो व्याख्यावी साधिकाश्चोपगत:। भायां

च ते पतिङ्गता।

एवं कुरानमाने न कुशापि निसिकति "वन्देक्षमितसीय वाचन न वादवेदु" किंव वोटरिकेता, वायुविभागाने, पतल्लेपु जमलकोलहेन च ध्वनिवर्णानि बाधा न भवति। अस्माक्षुमल्लेवु वातवादेन बाधा भक्तिति दू अद्वितय एव।

नेला दासा किंतु कर्म कृति। परिशिर्मिकी गुणगतिः। यावतकालं

मभिलिपिक्षं च, तावत्तीत् कर्म करित्वमिक्षांतु तदनुकूलव मांत्रिको वृक्षीकुर्धनिः।

सर्वभ! पक्ष तदनुसृतवा लिखितांम शासीः केंद्रिक्लिन्कस्य संबंधातु। वा

पक्ष मै हृद्य कैसे। अद्वृत्तिकिसृताः हृदाम्। अशुरूपकतायते लम्बृति न

दृष्टिकथावादकरताः।

अत्वरुपकतायौपरि लाक्षण्ठितु तत्वितिः किच्चिदवस्तं स्थापयेः। बहुभाषिः

सर्वसी वेद्युक्ताते। और विश्लेषणात् नैन गभर गुणसृताशु। एवं वृहत्वा स

प्रबंध: क्षित्या: भविष्यतः पुली वा पुली वा ।

उपरुपकता कल्पित गत उदाहरणां एवं हम सरलता की पात्र सरिता

पुराणित होते हुए देखे हैं। पक्षमन्दाहिनी का कल-कल निनाद भी देनिए –

1. दीक्षित: वीरुद्धार - पृ 20
2. दीक्षित: वीरुद्धारावलिक - पृ 57
3. दीक्षित: भारतविश्व - पृ 173
4. दीक्षित: गार्डिकिज्य - पृ 11
5. दीक्षित: महाद्विसन्ध - पृ 43
6. दीक्षित: मूर्त्तोच्चर्णात् - पृ 4
रामालिस्कि पत्रितौप्रिसि विमायाद्वृत्तिः। नीराचारुक्षिपतिसिनेन कर्न किल्लस्या
मान विशाय यह जीविति तहिर नायाः। लोकमालोक्तिययासितानि कर्क समरेषः।
वलस्य। कुलानुष्मपेदि वचो गुर्धण्डः। वस्तिक्रिया चानिप परिएवति नवस्ति माध्युषुः
सम्भाव्य राजकृषि स्मरणीनुसः। वैरो कुण्डीकर्ण वृत्ति पतिमालस्तःस्तुः।
हा हा मया त्व परिप्रभृतोपसी। मामेव हन्तु कथुखत्वति।
वेदता स्वक्षीया वृत्तेऽक्ष्मुषः। संविक्कल्पे द्वे पयसा भूते।
स्वामीमुतै बनमलोक्षुराजादाः। ततात्ती रण्ये रितुन्त जियते नितानंतः।
पर्वस्तु वाचवर्धकादेशस्विचारिण्ये। लोकमोक्षमानं कर्त्त विख्यातः।

स्वामुक्कल्यता -- दीक्षित जी की भाषा नाटकों में रास के अनुसार ही लघु काल्पनिक
कर लेती है। क्योंकि उनकी भाषा में माधुर्य विधिवादी रूप में होती है,
तथापि वीरस्त का गुर्णा आते ही भाषा माधुर्य को कोइधर शौकगुण के समीप
चली जाती है, जैसे --

प्रौढ़र्द्वीणाकाराधिकृतश्चवर्धानुभूतस्तरात्तमः,
मध्याकारवल्क्तस्तिनिक्षिप्तवधिराचौर्षगुर्हरः।
नीराचारसामान्याद्वृत्तिः पुराणिति गिरिमहीं कितामदितम्।
स्तदवेशाधिकार्मकवृः वादिता भवचतो वन्दनकेश म शिपितलिङ्गः।

प्राकृत भाषा -- संस्कृत के समान दीक्षित जी की भाषा में प्राकृत के सुन्दर
उदाहरण मिलते हैं। प्राकृत में भी मन-मस्त का स्वभाव प्रभाव किया है, जैसे --

रूपास्तर नित्य अस्तर नििस्कर्म लोकान्तरा रश्करो, पर्वत नामे
किर्तिः कार्यान्त सही रूहिष्ठः। से चक्षुसि अयास्विचिलितं शुक्रति।
रण्ये च वृत्ति सुधिविदि।

1. दीक्षित : प्रतापविख्यात 2/7
2. दीक्षित : धीरमुक्तिराजविख्यात 2/3
3. दीक्षित : भारतविख्यात 2/27
4. दीक्षित : भक्तिविख्यात 1/14
5. दीक्षित : धीरपुत्रात 2/29
6. दीक्षित : धीरसुपन्ध्रिराजविख्यात 2/20 13
आ दायमण हे काणा पिणणी सुलीणनो विहिणी। कले भवणीभंडणारी वि सुलीणणी सविष्णाह।

आण लत्त् गन्नूण सुकृत्तीण दैव वराण को दोसो।

मध प्रकृति का अनुप दुःखो देखने पर हम पौध की भी सकल पुष्योग पाते हैं, जैसे -

बजंगौरवरसमुद् गुहवंकसमुबल्लो।
लेपणपुरुषाकर्षणे हृमेरि लौकरसानां।

जैविक पितां मुसलमानपर्न सहा जया देख तौहें मचा।
जवाव भीमे पारि दौलते मचायनवे क्षति कह पुरुषो दोसी।

हिन्दी भाषा - गाथिकारण तथा भूभारोत्सराणू मे कही पानी की भाऽना हिन्दी है। दिगमात्र उदाहरण पुस्तक है।

कृत्ति के साकुर करते व लकृतों की सोगन्न चाकर वहां हू कि जी कछु भी कहूता, सत्य कहूता।

मेरी गवाही देने की वास युक्त हमारे मेल-मेल गुवाह लिए, महान फुलवा दिया, रामदास गारे का मुनिया आना चाहता था, तेसे मेले में हौस दिया, हम लौगों के बाल-बाबू, स्त्री, घर, पथ, समप्ति दादि इच्छे अस्ला-चारों के कारण अदरक है।

मे श्राद्धण हूँ, महाराजा कृष्णान के महाराजानी पदराणी अथवा उपरोक्षा मौतियौं से लदी हुई आर्ध है। मे उन्हें पानी पिलाने के लिए हूँ।

1. दीक्षित: वीरशंकरान - पृ 78
2. दीक्षित: भक्तदर्शन - पृ 53
3. दीक्षित: भारतविजय - 5/5
4. दीक्षित: शैतानविजय - 3/2
5. दीक्षित: गाथिकारण - पृ 17
6. बाबी - पृ 18
7. दीक्षित: भूभारोत्सराणू - पृ 19
नैपाली भाषा – भारतविज्ञि नाटक में भारतमाता की नैपाली स्त्रियाँ की भाषा नैपाली है, जैसे –

"यदि आपना सज़ाज़ा बाट तेरी है दुःखारी हुने ह। तो तेरा दुःख को नाश करने ताले कौन हुने ह।"

ज्योतिष्प शास्त्र का बलबाट हामी जान्दै ह। बुधकृष्णान्ते-परासरस्मिनीसूचि आदि इन नमूने सम्पूर्ण ज्योतिष शास्त्र इस पक्षिका छन।

महाराज! अँगार छ दुःखा है कि काशिम कहाँ है ऐसा गहरा नहीं है।

इन पुढ़े दीक्षित जी की भाषा की सरलता के कौन से उदाहरण दिए जा सकते हैं। दावेदर्शिक विवेचन होने के कारण श्रेष्ठ विज्ञान में सबसे ही कठिन था। इनके पर धार्मिक दिवार देता है, परम्परा वह कठिनता भावों को दृष्टि से अच्छा है भाषा की दृष्टि से कम। जैसे –

"जीवन जीने के लिए नास्तिसात्यार्थ अत्यंत बड़ा है। सत्त्व तर्क बनाते है। वातरुपार्थ तर्क बनाते है। रुपातः रुपातमानात्मा।”

अनुमानार्थयत्स्फोभविद्विमस्विन्दारावृत्ताः। नापि जीवन मन्त्रित एवेन बहि। सत्त्व यादु मायते।

हेरको वेचकामे प्रचक्त्वे चित्तंकेतेनातिक भवेत।

निःशरीरविकाणोत्पत्तिः सत् समाधुल्ले।

इन उदाहरणों को देखकर ऐसा भाषा होता है कि यह नार्किस की मौष्टकी की गाथाचर्चा होगी न कि किसी भी पर अभिमान नाटक का सुझाव। इस कठिनता के लिए यदि हम नाटककार को देंगी कहाते हैं तो इस हमारा उनके प्रति अर्थवाच होगा। दावेदर्शक विषय की नाटकीय भूमि
पर उत्तरान गुलंदक की सामग्री नहीं होती। चसी नाटक में भावों की सुनाम-माता के साथ भावा का शास्त्रिय भी कुछ स्थानों पर दिखाईता है। यह सौद नाटक कार के कोलकाता से भावा की बालकता व नीरसता कहाँ लिखें भी जाता है। यह हम देखके और दिखा ही रच जाते है। जैसे -

चांदी - समाप्ती शाला: किमिल कुंडीकुंडिकारा,
न गौपाना मौखकी कलशंसिहाना। दुख का मैं हू।
बंसली: स्वा स्वा गा मुगल के शासनजिले。
शंकर - विद्वानदेव मार्ग गमंगियुमदो नारायणयुम।

विस्तारण है लिखक उदाहरण न देते हुए दीक्षित की ही दीक्षित भावाओं के सम्भन्द में निहस्तो सब का जा सकता है कि उनका भावा सम्भन्द के साथ दिखाईता को लिए हुए है।

पात्रों की भावा - नाटक में पात्रों की भावा के सम्भन्द में बाराहुर चित्र-नाथ का कहना है कि -

पुराणामनोवादारस संस्कृत स्वास्तकांतसारधू।

अणिद्व - उल्लम, मध्यम शैली के चित्रान पूरी पात्रों की भावा संस्कृत होती है। दसी लगी की स्त्रियों की भावा के सम्भन्द में हम का कहना है -

सौरसनी प्रयोज्यता तादुसिना। दु घोपितादू।

केट, चिट, राजमार यो शैली लोगों की भावा के सम्भन्द में कहते है -

केटना राजमार्या वैष्टानामययागित।

उल्लम संप्रदायित्वों की भावा के सम्भन्द में कहते है -

असकृत संप्रदायित्व रिहिनारपुरानं पुरानं

1. वही - 3/6
2. चित्रानाथ : साहित्यदर्शन - 6/158
3. वही - 6/159
4. वही - 6/160
5. वही - 6/167
रानी, मन्त्री की पुत्री और केशावदिवस की भावा के सम्बन्ध में विचार करना कहते हैं—

देवीमतिकुंटले साध्वी कैसे चलते हैंकि?

विचार करना का वक्त है कि जो पता जिस देश का है उसे उसी देश की भावा का पुष्पक में कहना चाहिए, जैसे—

देश नि:स्मार्कं दु:खौ पुनः नि:स्मार्कं सत्य भाविष्यम्।

रानी, सरी, बालक, देवी, पूर्व और उत्तराधि की भावा के सम्बन्ध में विचार करना कहते हैं—

योक्तताकी वाक्यवाचित्विवाचित्वशराय तथा।

बालू, नगुणक, नीकाणि पर विचार करने वाले, उन्नतकों और अन्तर पुत्रों की भावा के सम्बन्ध में कहते हैं—

बालान्त कर्णान्त त नीकाणिवाचित्विवाचित्वशराय।

वेदविधानम् पुनःदत्तव संस्कृत जातराजः।

हम देविक जी के नाटकों में पात्रों की भावा के सम्बन्ध में देखते हैं, जैसे पात्र है कि उन्होंने पात्रों की भावा के सम्बन्ध में अंकित विचार करना व्यक्ति भाविष्य का पालन किया है।

नाटक के अनुसार हम पात्रों की भावा का उल्लेख हम प्रकार कर सकते हैं—

वीरुपालक — इस नाटक में पुत्राप, शक्तिनिश्चित, मानसिनिर, चिन्तार, राजसुक्तुशक्तिनिश्चित, सिकिम, शाक्तिनिश्चित, राजसुक्तुशक्तिनिश्चित, मानसिनिर, चिन्तार, शाक्तिनिश्चित की भावा संस्कृत है। रेख, दौचारिक, भिला, भिलापुत्र नर पुत्री की भावा प्रकार है, जबकि पुत्राप की पत्नी, योगिनी और पुत्रापुत्री की भावा संस्कृत है।

कत्वस्यसे राजविविक्षय

— पुत्रेश्वर से उल्ले शाइ सामस्तोऽ, चन्द्रवर्दर्। गौरी,

10 दरि — 6/167
20 दरि — 6/168
30 दरि — 6/169
40 दरि — 6/165
शैरी का मन्द्री, उसका अवश्यकारी, पुष्पकिरण की पतिनाथ, जयचन्द, उसकी पत्नी, संपूर्णता आदि की भाव संस्कृत है। लक्ष्मा ब्रम्हस्वदा की भाव प्राप्त है।

भारतविद्या — इसमें धार्मिक तथा पति की भाव संस्कृत है। केवल भारतवाणी की वहीं नेपाली होने से उसकी भाव भी नेपाली है।

गाँगिन्ति — इसमें महाराष्ट्रािगी, अंबुला, बड़ील, नवाबहीश, अरु, डायर, पन्ना, बाललुक, तिलक, मुहम्मद जिन्ना, कलाकृति, भारतवाणी, श्रेष्ठत, देवदास आदि की भाव संस्कृत है। जबकि भारतवाणी की वहीं, कल्पराजचार्य, किसन, कल्प आदि की भाव प्राप्त है।

कलामिन्ति — इस नाटक के आचार्य कंदर, मण्डनमिथ, व्रिहतिल, शिवरिस्वप्नस्वाद, मण्डनमिथ का शिक्षक, कौलाचार्य, बाहुचार्य, चूर, त्यास आदि की भाव संस्कृत है। मण्डनमिथ की दासी, तुरिगा, चर तथा किसतहा चावाकी की भाव प्राप्त है।

भवतमस्वर्ण — इस नाटक के भराभ श्री, तुर्कान, मुक्ताजित, कर्णाकारण, वेदानश्री, वाणिज्यश्री, शास्त्र के बुध, मनोरमा, मण्डलिका, लीलावती, बुधदुष्क की पत्नी, शिल्पकाला, आदि संस्कृत भावा बोलते हैं, जबकि वाण, शिल्पकाला की संख्यां ग्राहक भावा का प्रयोग करती हैं।

भुवनेश्वरश्री — इस नाटक के बृज, रोविकम्यूण, काम्ब, वाद्य, दुर्गासाग, नारद, अष्टु, बलराम, साधुतिक बाणायासुर, शंकर आदि की भाव संस्कृत है, जबकि वाण, पाटलिपुर, ब चिंधुक की भाव प्राप्त है।

भावा में विज्ञातिकाः — दीनका जी के नाटक में दुर्गापति की भावा के सम्बन्ध में दुर्गापति निर्देश है। एक ही पुस्तक के पार्श्व में भिन्न-भिन्न नाटकों में भिन्न-भिन्न भावावलोक का प्रयोग करता गया है। तीज, दशम में पुकार की पुकार के बादवृक्षविज्ञातिकाः में पुथिराज के पुत्र की भावा के थिप संस्कृत नाटकाधिकीय परम्परा से उत्पन्न है, तथापि यह उनके अंत में संस्कृत
की कोई प्रकृति कुब्राते होते तो अभिक स्वाभाविकता आती। विशेषतः में समूद्र
की में चर की भावा संस्कृत है जबकि उसी नाटक के छठे क्रम में उसी प्रति की
भाषा प्रकृति दिवाराई गई है। इसी तरह प्राचीन में अनुवाद की भावा संस्कृत है
जबकि यही पाठ आगे चलकर संस्कृत भावा का प्रयोग करता है। इसी तरह
भारतविश्व में बादों की नाटकी की संस्कृत की भाषा संस्कृत है जबकि अन्य
नाटकों में संस्कृत की भाषा प्रकृति रात्री गई है। यही समय समय से हिन्दी
भाषा प्रकृति की नाटकी की संस्कृत से कुब्राते होते हैं तो अभिक स्वाभाविकता
आती। दीक्षित हो जै, फैक हादी की भावा किसी नाटक में
संस्कृत दिवाराई है तो किसी में प्रकृति। यही समय पाठों में समय भाषा
कुब्राते होते हैं तो अभिक अच्छा होता। इसी तरह वीरगृहीताराजकियन नाटक
में संयोगिता की एक सबी की भावा संस्कृत है जबकि अन्य दो की प्रकृति।
भाषा के समय में एक अलग से बात भुवारोधाण्ड में निकली है।
प्रकृति नाटक का व्याख्या पूरा विश्वास है। इस पुकार नाटककार ने कुब्रा के
बुध है समय समय कथाक में यह नाटक में खिलके ओर दूरों की भावा हिन्दी
रात्री है। इस पुकार का प्रतिकृत लगा है कारण यह समय अश्रुत है।
यह प्रयोग दीक्षित हो जै की वैसी ही है कौन - कैन्यानुसार ध्वनि रूप राम की
अनकती लीला में उन्हें वाचनिक वैकृत्य पहनाकर, लाभान्वित कार में वेदान्त
बाज के बुध की वाचनिक सह-सह कही भावा में तत्वात्मक करते हुए उन्हें वन-
वाश के लिए है नाटक हुए। इसी तरह भारतविश्व नाटक में लगनवादों हारा
संस्कृत भावा कुब्राते होते हैं। दीक्षित जी की आयी भावा बना बना दिया है।
इस विश्वेनिगित हो है हुए भी कुछ नाटकों में पाठों की भावा में एक समया-
कुलक व शास्त्राकुलक पाते हैं। वीरुद्ध भाषा में विश्वेनिगित की भावा संस्कृत,
व भारतविश्व में भारतमाता की नाटकी सबी की भावा नाटकी सकर दीक्षित
जी की शास्त्रीय जान का परिवर्तन दिया है। इस पुकार के कुछ विश्वेनिगित जै
विश्वात दीक्षित हो अनन्त अनन्त संस्कृत की मिली है।
शब्दभाषाकृ - दीक्षित हो अनन्त नाटकों में संस्कृत, प्रकृति, हिन्दी तथा
नाटकी भावा के प्रकृति शब्दों का प्रयोग किया है। संस्कृत के ऐसे अनन्त
शब्द उनके नाटकों में जा रहे हैं जिन्हें तत्सम शब्दों के समेत हिन्दी भाषा में बुलाना योग्य किया जाता है, ऐसे-

हसेन एस्टरैल मैक्लेस, हसेन दर्धाकुल, विश्ववादा किवर पुरुषविद्,
दन्तावू पिसु, गवै कृप्यावामि, विज्ञातानेत्रा, तुरं उत्सुक, चोटा वदानि,
कौष्ठ्यो वक्त, हस्तकारं वार्तानि, कैम्बिया गृहिष्ठा, गायद्वरा, गन्दुमुखि-क्षणं,
समवाच्यपंक्ति, दुग्धपुष्का, दीपवंशकावा, कृतंमु, वर्तालाम, व्यासावद, ताड-ताडावद, कुर्टिला, सवानिपिये एमैक्स हसेन, तस पुराणा शोभाक्षण
कुटास्मिन, यद भक्ता महति कुषा, परमेनादकी नारायणवलक्ष, वामहरस-नृत्याम, तारण्य ते पवारीा शारिर ओन शब्दों का सकल पुरुष पाते हैं।

विदेशीशब्द — समाग के पुराण के कारण दीक्षा जी ने अपने नाटकों में अनेक

दिवसी शब्दों का संक्षिप्तकरण करके अपने नाटकों में पुरुषित किया है ऐसे —

वन्दकी, वादवर, हा सल्ला!, पोटापी, गवर्ण!, पिसु, पीलन, बैद्धंति, टेन्स्निप, शर्भितनाथ आदि। कुछ ऐसे शब्दों की भी हम उनके

नाटकों में पाते हैं जिन्हें यदीशी भाषाओं हैं एकर उनके साथ संस्कृत का शब्द-रूप, शास्त्रुष्ण या पुरुषों वक्तका उन्होंने स्वात्म के रूप में पुनर्नत किया है, ऐसे —

मोटररैक्ष, दर्शनकार, दर्शनकटवा, समानीबुधा। बाद कोई

शब्दों का पुरुष उनके नाटकों में मिलता है। इस पुराण के शब्द हमें भारत-

भविष्य नाटक में विपुल निकलते हैं। ऐसे हम समय का बौद्धी भाषा का

पुराण वह सकते हैं।

मुहावरे-लोककित्विया — भाषा को आकरक व पुराणमण्डल बनाने के लिए दीक्षा

धी ने अपने नाटकों में अनेक मुहावरे व लोककित्विया का सकल पुरुषित किया

है। ये कुछ संक्षिप्त हैं और कुछ का प्रीतग्ना से संक्षिप्तकरण किया गया है,

ऐसे —

उपनिषदः निविद्वत्सरस्वतीः ॥ मै बुधकुलः पारारस्विनिता निगातिता।

विनाय के मतीश्च निकृष्णताः ॥ भक्तुदान नागाभोजनीपुष्करिता।

10. दीक्षा — दर्शन-विद्वान्तराजिविक्ष भक्तुदान ।

30. वधृति — 3/4 दीक्षा : भक्तुदराज — 5/1

50. दीक्षा — भक्तुदान-राजिविक्ष भक्तुदान ।
वेष्ट्सूलणिध्व, पतितो गले स्थान, उद्योग शिरोदांना मुखल्याक्षकांति
शासकांशिविवाह, कुष्ठियाचंतपादू छिन्निति, मुखव्यां विलिकाता: पत्राने
समूलित, कोसिप दंगलतमण, मुखवे मारित:, दिक्कीषण करिण किम-\
कै दिवाद:, मुखियाचेतानि मार्गार तळळो, कण्ठको सो मुखः शौकनिष्ठ:
शापन्निनामाणि केनारादू समूलित.

सुमित्विन / - दीक्षित जी ने अपने नाटकांमध्ये ठोके सुमित्विन बना गया किया
है, वैसे -

13. वीरभोगाभयाकुमारा, न देयन्त न पलायनः। शेष विधानाचा किंतु तेषां
14. रुत्य, वा: चौराण मनायते सरलीनिग्रहा, उपासनानिपूजयेत शासनीयीयो दिवदेनः.

1. दीक्षित: वीरुमलाप - पृ 6
2. वही - पृ 57
3. वही - पृ 70
4. वही - पृ 70
5. वही - पृ 87
6. वही - पृ 87
7. वही - पृ 97
8. दीक्षित: भूमारूपरणा - पृ 14
9. दीक्षित: गाणितिकय - पृ 13
10. वही - पृ 21
11. दीक्षित: भारतकिवलय - पृ 83
12. वही - पृ 88
13. दीक्षित: भक्तसूत्दर्शन - पृ 6
14. दीक्षित: वीरचतुर्गितिकय - पृ 38
15. दीक्षित: भक्तसूत्दर्शन - पृ 30
16. वही - 5/5
17. दीक्षित: भारतकिवलय - 6/4
1. वही - 6/8
2. दोबित्त - गाँवीलिखित - पृ. 6
3. वही - पृ. 19
4. दोबित्त - वीरपूर्वीराजपी - पृ. 44
5. दोबित्त - भारतीय - पृ. 17
6. वही - पृ. 62
7. दोबित्त - वीरपूर्वीराजपी - पृ. 23
8. वही - पृ. 26
9. वही - पृ. 40
10. वही - पृ. 41
शब्दों के समान नाटकों में कतिपय स्त्रिय विफल अगुणिता भी मिलती है, जैसे -

1. वीरसुलाप में "क्रियोधुरय" शब्द पुलिंग में दुरुस्तशब्द पुरुषों किया गया है, जबकि है सुलापिंग में दुरुस्त होना चाहिए। इसी तरह "हेमराज-

2. गृहवा तथा रोपितृय"। यहां शब्द का नुकसान में पुरुष किया गया है, जबकि है सुलापिंग में शब्द होना चाहिए।

3. कठिनशब्द - जहां ध्यानशाला की कतिपय अगुणिता मिलती है, वहां कुछ धर्मशाला का पुरुषभो भी मिलता है जो नाटक में आते हैं, जैसे -

4. पुनर्जार मिरियार, चौराहामुटक, डिखालखश आदि। एक तरह के पुरुषों भी ही काबव में उद्धित किये जा सकते हैं परन्तु नाटक में नहीं।

5. इसके अतिरिक्त दीक्षित वी का पृथवीभाषा पुरुषों के पुरुष भी मोह दियार देता है। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत है -

6. उदतिथियार, अभिनवित, विदण्डचित्त, आदि।

7. वनस्पिति - दीक्षित जी के नाटकों में वनस्पिति के अंकों उदाहरण मिलते हैं, जो भाषा को हानि पहुँचाते हैं साथ-साथ शब्द दर्शित की ओर भी ली गई करते हैं, जैसे - "क नौं चाय तवनातर।" वह शब्द का दीक्षित जी के अंक रखने पर खाने नाटकों में पुरुष किया है।

8. उदाहरण के लिए महाराज शब्द का अंक बार पुरुष किया है। इसी तरह "वीरभौमकुमुड़ण" "सर्व-मेवजहले" आदि उद्दितों का अंक बार पुरुष किया है। इसके अतिरिक्त भी कुछ पुनस्पितियों के होने पर भी भाषा को हम लफ्त ही किये।
समवाद योजना

बन्य तलवारें के समान समवादों का भी नाटक में महत्त्वपूर्ण स्थान है। समवाद से अभिनंदन है दो या तीन से अधिक पारम्परिक वाक्य के मध्य ही ने बाला वाली लाग। समवाद की विशेषता के नाम से भी अभिनंदन किया जाता है। समवादों में वह पारम्परिक सस्त्र चरित्र पर प्रकाश पड़ता है, वह काहानी को भी आगे बढ़ाने में गति दिल्ली है। समवादों में जिसके सम्बन्ध में है वारंची की लागरी है उसके सम्बन्ध में अपना मत बनाना के लिए समर्थ हो जाते हैं। प्राचीन सस्त्र नाटकों में तीन पुकार के समवाद पाए जाते हैं।

1. स्थलाक
2. निन्दतारशाह्वा
3. सर्वशाह्वा

स्थलाक — पावन जिन वारंचों की कृतिव वन में ही सौजन्य वह, उन्हें किसी को नहीं सुनाता, उसके समवाद या रक्कम वह बहाल देते हैं।

निन्दतारशाह्वा — जो समवाद कुछ ही वर्षों को सुनाए जाते हैं उन्हें निन्दतारशाह्वा कहा जाता है। जिस और जिन वर्षों को समवाद न सुनाना हो, तवक समवाद बोलने वाला पावन हाथ की ओर कर देता है। यह प्रथम वेल वाला सस्त्र के प्राचीन नाटकों में पिल्ली है, तवक भी पूर्णता क्षम करना नहीं हुआ है।

सर्वशाह्वा — जो समवाद सबसे सुनाए जाए के वस कोटि में जाते हैं। आकार नाटकों में उन्हें ही प्राचीनता दी जाती है।

सब समवादों में आकार के निम्नलिखित विशेषताएँ आक्रमक मानते हैं, जैसे —

1. प्राचीनता
2. सर्वत्ता
3. सर्वत्ता
4. प्राचीनता
पत्ताचुक्तात
7. मनोरंजकता

इन निरोपकालेने के आधार पर एम्बल दीक्षित जी के नाटकों को देखता है। दीक्षित जी की बोलचाल की नाटकार के नाटकमार हैं। वहाँही अपने नाटकों में पूर्व पौरंचत तीन शैलियों में है पुराण और तुलसी शैली की अपनाया है। स्थान-भाषा के लिए "मननस" शब्द का पुरावृण विषय है। सामान्यत: नहीं होने के प्रकाशाम में अपने नाटकों में स्थान नहीं दिया। आलोचकों में जिन निरोपकालेने की सम्बन्धितों में आधारकार्य माना है वे ही हाल नाटकों में यथातथा सिद्ध जाती हैं। उन्होंने के आधार पर एम नाटकों का उल्लिखित कर रहे हैं।

प्राचीन आदरे - मानसिक - पुराणमान्य कार्य व भोजकार संजीवनानन्द 
मन्नी - महाराज ! पुराणस्थित शोभावृद्धि कुस्ति, जनन पुरे शैले।
मानसिके - कुवार ! तव गत्वा ते निधिय पाये भोजनानन्दोपक्षियः स्वामाक्षुकति, अंगाया क्षास्यति निकालिति शुभकार ।
मन्नी तातार - नान्हिमारा झोड़ा जल्लाणकारी सम्भाव्यानामुं।
गोरी - आश्वस्तामु, आश्वस्तामु चुरिहोन किम् विकास्तोति। स्वतीय-राज्यालभोक्ते समुसारवच। तिथिः प्रथम। पृथ्वीराज - चन्द्रवर्तारित्रु। लुक्कख्ता मम दृष्टि मैदय।
चन्द्र नसि नसि तुम पूर्व पूर्व मम मैदय। पृथ्वीराज - करे एव विलसकेन पशु तवां गाँव क महीप्यन्ति। स्वरित्त मैदय
वहतु मूलस्नानित स्वाते मैदयसिः। निषिद्ध शिखर - महाराज ! का निगमिको भवन्तः। शंकर - मण्डला परः कुमारनामार्थ भौविष्यामुं। पूर्व शिखर - कु: भौविष्यामु कथबाह्यमृ। शंकर - नसि, नसि भृत्यभूत भौविष्यस्वा श्रुताप्रेक्षानन्दामुः पायमितुमु निग-मितामिः।
राजा - विद्युत मनोरमाया बातें उपलब्धता ॥
विद्युत - सा तु सहा भरहे-रोगरौशनी विश्वास ।
राजा - किं कुमार! सा वा दृष्टা ॥
विद्युत - महाराज! मुनिवालैकृत्य: "कुमारसिद्धिता मनोरमा नामी कार्यस्थ्री समायातां" विषय शुभाद ॥
राजा - तस्य विश्वासवस्ते गुणा स्वमी इष्टिपि: ॥
विद्युत - शठादृ गुणान्तु न मै रोको। यद्य: ब्याप्तिवर्त श्रेय संसू मूच स शीतकालीनण श्रृवण कृपसमेत विश्वासवस्ते नूतनणार ॥
साम्ब - महाराज! अर्थ किशवनूतनी कुमान्त: ॥
यादव - वायु शुभस्ते यहैव राजाप्रतिण शान्तिवर्ण: कृप—सन्तोसस्मेत श्रद्धान्त ॥
साम्ब - पितृ: सबिष्ट प्रत्यें सर्वश्च एव सम्पूर्णस्मिति नत्ववत्स: ॥

सौभाग्य - दीर्घ जी हे समवाधि की यह अपनी रिश्तीकरता है। कठिन उदाहरण इष्टिष्टहुँ है एव।

विश्वासवस्ते - महाराज। भृतसंवादः संविक्षण भवन्तं विश्वासवस्ते गौरी। यथेतथा वस्त्रावर्धिन्य नसत् दल्वा विचित्र ॥
विश्वासवस्ते - स तु दल्वा क्षणिक नामिनिति सुचठों पुत्रीस्व। महामुखावर्षकलाली कृपासप्तभविष्यकाच।
हैस्तम - नन्दुधार! न तैतिश्वयमानस्व फरं समागतमुः। हिन्न पुण्डटक रिस्निन्द्रीकृत एव ॥
वाकील - फरं नागमानित्य पुण्डटकं कंपन्या: न स्वीकृत् ॥
हैसिख - निश्चित निश्चित पुण्डटकं सिद्धान्त नाह विद्यानाम शौचित्वकारिम्।
नागरिकं नायकेन पुण्डटकं नायकेन ॥
हैस्तम - करु हुदृढः। क्विमथे नन्दुधाराप्रभायी भक्तितमालिकायिः ॥
श्रेष्ठ - महाराज! तैत तु भक्तो विलामायीरं यथा तु नेता विष्णुभिः
विचित्रीये ।
हैस्तम - तत्पूर्व कथा कंपन्या: विलामाकामि ।

--------------------------------------------------
1. दीर्घित्व: भवतुधाराधिन - पृ 23=24
2. दीर्घित्व: भृतारोदकालम् - पृ 3
3. दीर्घित्व: वैष्णवारम्भिकाय - पृ 55
4. दीर्घित्व: भृतारुपन्य - पृ 101
गौरव - तीव्र अस्मार्क कार्य कर्थ पुरस्तु ?
गांधी - एतलु भवानेव जानातु।
गौरव - यदि कौशिक कार्य न करियथति तद्दा तु सदृ विहाय अस्माविभः
अपेक्षेक्षे एव गम्भीयः।

लल्लस्ता - इति दृष्टि ते भी सम्मान देकने योग्य हे जैसे -
जयचन्द्र - अशे साहित्यिर्मि ! किंस्क रक्षाग्रहः न रक्षसि !
सोनिगिता - गीता तु रूप्तीराज एवं वर्षारियः।
जयचन्द्र - रे दुस्तु हुलाभुंसि तु अस्मार्कसृष्टिसम्पर्कारित्वादिनी नासि
अर्था साहित्य कर्मानि राजार्य पर्यं क्षस्रितः।
सोनिगिता - यस्य स्निग्धारितः नागलो तत्तदा स्वर्णमयमेव नाहः
गम्भीरति ।
कोलायचर्मि - ताग्न मुख, सम्पुर्ण लिप्न, श्व-श्व मात्र कर्मार्क तत्तदि त्वमा
कुश्यालस्ये वेत्तम्यः।
पुंगिरि - ऐतैव करियथामिः।
कोलायचर्मि - त्वा स्मृतिः कृत्यासाधने निःस्मृ।

अशे साहित्यिर्मि ! किंस्क रक्षाग्रहः न रक्षसि !
रे दुस्तु हुलाभुंसि तु अस्मार्कसृष्टिसम्पर्कारित्वादिनी नासि
अर्था साहित्य कर्मानि राजार्य पर्यं क्षस्रितः।
यस्य स्निग्धारितः नागलो तत्तदा स्वर्णमयमेव नाहः
गम्भीरति ।
कोलायचर्मि - ताग्न मुख, सम्पुर्ण लिप्न, श्व-श्व मात्र कर्मार्क तत्तदि त्वमा
कुश्यालस्ये वेत्तम्यः।
पुंगिरि - ऐतैव करियथामिः।
कोलायचर्मि - त्वा स्मृतिः कृत्यासाधने निःस्मृ।
रे दुस्तु हुलाभुंसि तु अस्मार्कसृष्टिसम्पर्कारित्वादिनी नासि
अर्था साहित्य कर्मानि राजार्य पर्यं क्षस्रितः।
कोलायचर्मि - ताग्न मुख, सम्पुर्ण लिप्न, श्व-श्व मात्र कर्मार्क तत्तदि त्वमा
इति इति - पृ ११३ - ११४
श्रीकिरित्व - पृ १८
श्रीकिरित्व - पृ १६-१७
श्रीकिरित्व - पृ ४६-४७
राजा - अर्थ सार रिक कथितः
महाराजी - महाराज । कुटौं निर्माणित, पर संकल्पना गत्युभो भगवानः।
अकुण्यन्। "लुकानी कूल एवेति नांद्व वर्णात्वं निरीक्षितः" इति च कथितः।

राजा - अर्थ तदा च रिकः निर्माणः।
महाराजी - अर्थ कुमुदुपरस्वोगाँ \\begin{align*} \text{ा} & \\text{ू शुद्धमिनि सह पारिणामान् कर्तव्यम्} \\end{align*}
लोकः - रै सार्थके ! महाभारतयुक्तः भद्रे ते शौर्यमशंकः भयु प्रौढ़गुणस्या
कालिः निर्धार्य हस्तमानः। पिता रक्षति: निमित्त रिप्रेषयः।
सार्थकः - यथा वच शार्य प्रकटस्य शुभः कार्यः।
राज्याः - क्षेत्रेन भक्षणार्थस्य एको राजकीय शून्यायो हतः।
कुटुराम - सत्यः तु अभ्राद्यः: नामेऽत्त्वमेकः। तदन्नमाप्नुति निर्देशः
\begin{align*} \text{ू स्वरूपः} & \\text{ू बदनस्ते शिखितः} \\end{align*}
कुटुराम - सत्यः तु अभ्राद्यः: नामेऽत्त्वमेकः। तदन्नमाप्नुति निर्देशः
\begin{align*} \text{ू स्वरूपः} & \\text{ू बदनस्ते शिखितः} \\end{align*}
मानसिंह - सम्भव्यते अन्तः प्रतापो वीरः: परमित तु महाविरा:।
पृथ्वीसिंह - क्षायितपृथिविः सभयमाः समरभूमि एव निर्देशलिङ्गः भविष्यति।
वन्दुला - वाक्यपीठः महाराजे देखचे करते तस्मां तच्च पुकंटिभूतः
\begin{align*} \text{ू बुद्धिनामानी} & \\text{ू सब जनानु} \\end{align*}
वाक्यपीठ - चार्द नाममात्र नामवक्षः किमपि जानामि कार्यास्वाभावस्येत्
\begin{align*} \text{ू बुद्धिनामानी} & \\text{ू सब जनानु} \\end{align*}

सरलता - सरलता भी दीक्षितः वी के नाटकः की निर्देशितः है, भैलः -
सलीम - तहदीदानीग्रामस्या विद्वेष्टितः।
शिविरसिंह - बांध विश्वस्तिदिशः।

1. दीक्षितः: भक्तीदर्शनः - पृ० ६७
2. दीक्षितः: भूमिभरोडशताः - पृ० १४
3. दीक्षितः: भारतकथितः - पृ० १४९-१५०
4. दीक्षितः: वीरश्रृंगारः - पृ० ९८
5. दीक्षितः: गार्गिखितः - पृ० ४
सलीम । तरह गँठ अभवदन्नेन परिपालितोःसिः।
शौचचोरिः समरेकुपवताना गृहुरनिर्मितिण्यात् भटाना नैव कुतौःसिः भवेः।
जूबन्द । किः पृथ्वीराजः गृहीतं हतो वा किः?
पुरोहित । पृथ्वीराजसतु न गृहीतं नापि हतः । किंतु कहूः सि।
यो किः शोङ्गाङ्ग दुःखतदर्शता एव सिपुःदिक तबैव चापतः पृथ्वीराजः
यैन प्रवाने भुताः स्थितस्य योधारे हताः जवल्ल यया गगुः।
सहस्यः सादिनः।
जूबन्द । चापुषदाराजः हतो निग्रितो वा किः?
पुरोहित । स तु पृथ्वीराजेन सहेष्ठ संस्कृतवेन गतः।
मण्डन । स्वामिमः ! मिश्रार्थसनुङ्गस्तताः।
शंकर । स्वयं तव वादात्षुपगतः सा एवस्यांक भिन्नः।
शेष्टि । तन्नुवाय ! विमयस्य पद्यस्य मृगश्रृः।
तन्नुवाय = विकातकिलविवतम् शताः।
शेष्टि । मनुष्यः न हि विमित्विकाविवतां नर्म्यन्ते मृगश्रृः।
वष्णुला । मनुष्यः! कथा भवते किः न रौध्रे गृणात्यागं कारागारे वासे वा।
गाढळ । उभयायिनि मै रौध्रे। न्यायाविक्षितः समीप सत्यं वद अहं
सर्वात्त्वा तवं मौर्याचिनि। किमेवा बुद्धिमयं तुता "सस्मथेयाहै
नानूतनः।"।
बृष्टि । कुमार ! एवं सर्व मृग उपलभ्धः।
कुमार । भवताः कुमारः अविनिमोऽजा नाशा नस्त्युर्ज्जातः
कर्ष्णार्य तथा "यथावसतः ते साहस्यं करिक्ष्याः।"

1. दीक्षितः वीरपुत्रकप्पुरा - पृ 126
2. दीक्षितः वीरपुत्रकीरः - पृ 25
3. दीक्षितः शंकरिक्षितः - पृ 10
4. दीक्षितः भारस्कितः - पृ 10
5. दीक्षितः गाढळिक्षितः - पृ 6
भरहाज़ - पुजी। परव बहु पदन एवास्य वाहो। सपनन पुजीयाते।

महीरा - किमः सब भावीते?

भरहाज़ - मुख्यवास्त्वक फलो। अहमेतानं शदेन कारणिं नृसुलता कारतमः

यादाव - राविवक्रणपे केकृष्य?

राविवक्रण - यह मधुमुखः पतनी।

यादाव - यह गर्भिणी स्थल पुत्रत्र तथा गत्वा किं पुत्रवच्य?

राविवक्रण - मेलदैव पुत्रवच्य अस्वा: किं भविष्यति जुगे को पुजी?

पुव्वाहमक्षत - भाषा के समान दीक्षित जी के नाट्यों में सम्बन्धित का प्रवाह

स्तुदिवार् देता है। कितिवषय उदाहरण प्रस्तुत है -

जयचन्द्र - राजि पुस्तकिराजः संयोगिताम् वाहायरवीचः।

राजी - हस्तेश तदन् छा कर ।

जयचन्द्र - तदन्तश्च: परिभाषानयो लोकानिक्षेपणपूर्विक विदितम्।

राजी - यह तु अस्मां कर्म एव।

जयचन्द्र - अतः किम्, परं भव कैलास्तिज्ञ गृहीतवा भानूः प्रतिज्ञाय गतोः।

पुत्रप - सालुम्ब। किमसो मानोऽभविक्षेत कल: ।

सालुम्ब - बायुः।

पुत्रप - किमसो अशुविभः।

सालुम्ब - विनानातरागिणः किं किं न जल्लिन्ति।

पुत्रप - स्वापय विषयनाथी।

सालुम्ब - पुक्क्षतंशुलनुक्तरायो बहः “मेवार्न वहारावितता सङ्कलपित तुल्य धारन वो विकास्ये” वद्यवपताम्।

पुत्रप - तत्वम पुनः किमुक्तम्।

सालुम्ब - मथा च वनकीयपितमावुदातरिमित सङ्कलणामी: इत्युक्तवम्।

शिराज - दुवीभः भवन्ते न तथा पराध्यान्ते देवसेवेऽ पराध्यः स्मार्।

-----------------------------

1. दीक्षित: भक्ताद्वैतम् - पृ० 41
2. दीक्षित: भुमारोऽदानात् - पृ०
3. दीक्षित: वीरसृष्टिविज्ञापितयः - पृ० 24
4. दीक्षित: वीरसुताप - पृ० 68-69
दुधं - महाराज! अह काय सम्भव! हदानी परिवान्ता जेना स्वप-बल्लेन्ता! रव सादृशिमान्नारोपित्वायम्।

शिराज - वराकीन कदाचिदभिषायन्ति।

दुधं - तत्क अस्मि किमथेंद्रिष्टि। सादृशिमान्न गुहीक्ष्यामि।

देवदास - देवसेवायेव देवेन, नासिल अस्मैं महाराजाः चेन पत्तधानी।

अस्माकमकिष्ठाः स्वाभू।

कस्तुरबाई - हर ओढ़ा है तुम्हारी बड़ी पहाड़ी वहै रहने दो।

देवदास - अलमन, "विदुषी विदुषी किमे विवादः" सदेष्ट दीयताम्।

लम्बोदर - महाराज! कथय विधिमें जाताम्।

कौलावार्थ - सक्षीरितभक्ष्यवनस्य कस्मेव।

लम्बोदर - तथापि कथय महाराज! निल जाताम्।

कौलावार्थ - किमभेतु ततः पराशुरामत दृश्या मामेव दहति। मनः तेन पराशुरामता स्वाभू।

सुधाजिम्मी - विदुषी! भवानु विक्रमस्त्र निष्ठित।

विदुषी - गंधनु! बदन्तु भवताः विदुषीवेत यदृ दुर्याससिद्धा वनोरमा।

कुरुस सर्वस्बर्गाः। अह तथा: शूकार्थेश गुणार्थेश वह पर्यास्तणि।

शुनन - है पाट चार! पूँच नौ शेखरवत् निष्ठित।

पाट चार - ये बोल खन और आभूषण कहाँ है।

पाठानुकूलिता - दीक्षात जी के नाटकों के सम्बन्धों में पाठानुकूलिता विशेष गृह नया है। इनके माध्यम से पाठकों के चरित की जाल की सपने साफ्ट पदार्थ देती है, तैसे -

1* दीक्षित: भारतकथित - पृ 56
2* दीक्षित: गार्गिकथित - पृ 13
3* दीक्षित: संस्कारकथित - पृ 48-49
4* दीक्षित: भक्तसादक - पृ 15
5* दीक्षित: भुदारावदनात् - पृ 14
मन्नी - कुचासौ दूतः प्रेम्यते ।
जयचन्द - दिलीलोमयागिरियूल गौरीप्रकाशाचार्यीसः ।
मन्नी - अनायामाक मध्यीपरिधीणेन अनुशासिकाष्मिना: पुष्करवीरासु
शाल्मी परसं कैलानाचः श्रवण्यिन: अनुभुतस्य एव ।
अन्यचन्द - स तु यथा चिनाशिविविपरीतेऽव ।
अकबर - किन्तु दुर्गापूर्ण दासीहृदरस्तु ।
सेनापति - शान्ति पाटः शान्ति पार्थ तेन तु असंभाविताः ततः शरीर आपि
सख्यामान ज्ञेयातः । धन्यो शायामां जनः परमेश्वरकैस्मिनाच ।
शिराज - प्रान्तेनापते ! तेषा रिख्यत्वा कस्मिने वेदाते । द्यतनः
शैवाल्याद्विविषिकाल्यालक्षणाविविवादनगां निःशस्त्रः । पुनः समस्तान्तर-
मायावदास्यामि ।
प्रान्तेनापिकाः - महाराजः यही गमने नास्त्यम मार्गितानि! । परेषां तथा
मन्निकाः वित्तन सेनापत्यमेव भक्तविश्वेष्टताः विचारः ।
शिराज - अतएव युद्धनिर्वरनात्म अनुभावतज्ञोपतिविवापिमः ।
प्रान्तेनापिकाः - महाराजः क्रांतिकाते दोषालेखस्याः: अथामानि स्थितिस्तु
व्याजः यथा । तेषामात्र मन्निकाः उत्तराणे तिमेद्धितः ।
अतः इति युद्धाय संवेदने, तिथि गृहसिद्धिपर अनुभवावेते यथा कीर्ती-
वस्त्रः ।
शंदुला - अनायामाकाः क्रियाजी नेचाणि नौक्षाणे, भवाः चौर्ये धमावः ।
गोप्य - अनुबन्धायो विषय सत्यमभावः । अत्युत्तु सच्चत्व नित्यानीमिः
यथा सत्याया कथामेव अनुभवमेव मौदेश्वः ।
सुभाष - सात ! भविष्यतस्यद्विवादेव युक्तासिद्धित्व स्वरूपति निःशस्त्रः ।
कामे स्ते चरणासेवकः । मनोरमा माता नु मे जन्यदारी, सर्वाता
आत्माधिकृतमुम्यसि सत्यवादिः । माताः ! अणुपात्ताः पि पुज-]

1. दीक्षित : कीर्तिका-वीरराजविजय - पृ 35-36
2. दीक्षित : कीर्तिकाय - पृ 188
3. दीक्षित : भारतिकाय - पृ 45-46
4. दीक्षित : गाधिकाय - पृ 6
लीलावती - तैतादातारुण अहमकिंचनमा शिविरामा -
मिखलामार्य भावासंत स्वायं वहतरसार्गानि।

मुदर्सन् -
गात्र भरस्या कृपाते एव अभ्रणेऽद्वृ%%1

लीलावती - वत्स । वर्षात् जीव। गर्ह राज्य कुष्ठा।

वलारम -
किं जातय ॥

कृष्ण -
भकति वधाराय व्यक्तेन पदे जमीलायकलोकत्व शिष्याश्चिम -
माया दिनिहस्त राष्ट्र ताकिरसिम। वदानीं शिरो
भाजीवित। मये विकुलेनुम्भः।

वलारम -
वदाने दुरा वायुः। त्राभु विनाश स नितिसिम।

कृष्ण -
नायकवधारी, चौके ज्ञापिनि करण वातिलह नितिस्व अक्षय।
तत्रतिष्ठो छोड़यमार्चिद्वं च क्षित: मायाश्चियू।
उसके पुष्पक्रम न जाने कव गत ॥

मनोरंजन -
अन्नहुतो ते समान सम्बाद में मनोरंजन का होना भी अनि -
वहार भपना होता है। मनोरंजन सम्बाद तह दर्शन का मनोरंजन करते हुए
नाटक के पूर्व उनका लिखा भेदित करते हैं वहा कथानक की वैसिश निर्माण
करते हैं भी सहा करते हैं। ऐसे सम्बाद में नाटकों के विनाशी सम्बाद का
परिचय भी भेद जाता है। ऐसे विवेकी नाटकों में हम तह तरह के सम्बाद पाते
है, ऐसे -

विश्वासी - लक्षी: ॥ शुक्ल शुष्काद्वै तैसः \ तैसः \ तैसः \ तैसः
शिविरामा: देवता: मन्त्र, ये भूत-भविष्यित्रमानवुद्वस्तविज्ञारे भविः।

वन्दनार्थ -
लन्तैव, निर्माण विभू।

विश्वासी -
सम हस्त निरीक्षा मणिबाहुः कथय ।

लाठ -
रत्न दर्शनम्: अविदायवधारीयो कृष्णस्वरापनि:।
विश्वासीश्चिमन्युज्गत: कथोऽं पुजा: पच्च उपमां राजस्तु है मुनि,
अभ्यासीवन्य सम्पूर्ण विषयाने विश्वासी चौगत:। भारा है

10 दीक्षित: भक्तिपुरसन् - पृ 89
20 दीक्षित: भुपारीदासन् - पृ 27
प्रतिलोमः उभयः गात्राकटते । कथा ! तिं सरस्यभवारस्ति न वा ?

अक्षरः कथा प्रताप जीवित-नकः ? । प्रकृततः भूतानीते पुल्लिङ्गरासाः । भट्टे
कनुभवते सरस्य अभिलित्रिकः पुष्करकः । चतु पुनरितः कथमणि
न निन्दः ?

मानसिंहः बाजुः मृतः संभालते । एकायतनः । बसुः । प्रतापः श्री-श्री-
तंत्रो हन्सस्यो वा । विसर्जनः रिस्थः पुनरुपारुप भूतः

शाश्वातः गम्यावपस्य महाराजाः । अवसन्नः श्रीरामः विलिताः श्वस्मा
च आनेप्यामि

अक्षरः शाश्वातः सबूतः तवै शर्मा संभालते । तथ तैरितमेव गच्छः ?

न्यायाभीष्टः तथिवमद जानानि गृहीतः । अनन्त नन्दकुमारः मौहनस्य परम्यः
बाहुभूमति गृहीतः

साली बुद्धरसिंहनिस्बे जानामि अवलितः बुद्धि

न्यायाभीष्टः सम्पूर्णः अविस्तरेश्विस्म कथवः

साली-वेशं सो नन्दकुमारः यम मिक्याभूमिगति गृहीतवः मया सह
सुकर्ष्यकारस्थे सार्विकः गच्छः

न्यायाभीष्टः नन्दकुमारः तिमिरः साध्यः ?
नन्दकुमारः सर्वसत्स्मेव एते न जानामि निकालामि का वार्ता

न्यायाभीष्टः साक्षिः अः कथवः

साली तथस्य सुकर्ष्यकारस्थे सार्विके तानि दर्षितः निर्भरितः । तेषा मूलः
पूष्टः पुनस्ते सुकर्ष्यकारेण कसोदेभिति पूष्टः

न्यायाभीष्टः साक्षिः पुनरः कथवः

साली तदनन्तः मम पतनी मया बाणः कर्म गृहीतवः उदर्शुस्तियः

करोँधा शुस्मपन्नः भोजः दानिकनिर्देशः मम कीः

न्यायाभीष्टः विविधो वक्यसिः ?

साली वदेसवणि दुर्भं तलस्वेद सर्वशुक्लः

कोलाचारः बागः सम्पूर्ण तत्तिथः तद्व-यद् मया कर्मचारः तस्य तस्य
प्रवृत्तिरूपः तलत्वाः

उपिकाः एकायत वर्णामामि

1. दीनितः वदेसवणि राजसिलः - पृ 54
2. दीनितः वदेसवणि - पृ 124
3. दीनितः भारतीसिलः - पृ 90-91
तौलाचार्य - यह त्वां कृत्यासारी निन्दी।
पुस्तिक - यह त्वां कृत्यासारी निन्दी।
कौलाचार्य - वरे मूर्ध! वद नियुक्तोश्चिम।
पुस्तिक - वरे मूर्ध! वद नियुक्तोश्चिम।
सवी - शिष्याते सम्भवायविषि, केनापि ततै दृष्टे जोगितां, परतु मल्लः का बज्जा?
शिष्यकला - सति! सम्भास्तकालाय परतु तलाभस्तवतितुबक्कः।
कति - सर्व स्कृत कथा यहे से वार्तमकार्य साधनियमा।
शिष्यकला - सति! यह पुभारे सिक्षाविचारी जगदम्बिका मम मनवाचौरि
कमपि समानीय लाते भध करं सममयः "भद्राजान् भ्रमरथः
ते पति?
हसुक्तवा अन्तर्पिता चाम्बलः।
नाराय - कृष्ण! योनेव सह सवीः धैर्यमा। यह कथाति यहे
गाण्डिवकालायैन करा रहितवा अध्यायन नेपालिम।
कृष्ण - युक्त यथा कथा निच्छयः।
विद्वान - महाराज! में भी जाक्षा, क्योऽि कृष्ण की दृष्टिम में न आणै
वाली इन निखर्कः को कल कौन लाकर देगा?
नाराय - एल अलुः।
विद्वान - यदि ते पांटी तैं जाए और चीर लाकर बाँटो-हः को लेकर
भाग जायेगा तौ उनकी पूर्ति तुम कर दोगे?
एक पुड़ार दीक्षित जी के नाटको के समबाद्रे में इसे के सभी
विद्वानाएं पुष्प होती है, जो एक सहल नाटक के लिए अद्वितिक होती है।
इसलिए इस दृष्टिम से हम उनके नाटको को सर्वात सहल पाते है।

---------------------------------
1. दीक्षित : शैवविज्ञ - पृ 46-47
2. दीक्षित : भक्तचर्चा - पृ 42
3. दीक्षित : भूमारोहिण्य - पृ 16
पारंपारिक आदर्शों की दृष्टि में कैली का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय साहित्य क्षेत्र में इसे रीति या दृष्टि के नाम से जाना जाता है। किसी भी कलाकार की विचारों को अभिव्यक्त करने की पद्धति या ढंग उससे कैली होती है। इसलिए धुर्यक कलाकार की अपनी ही कैली होती है। अपनी कैली का शिविर आपनी कैली के माध्यम से सामान्य पुस्तक की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कैली में कलाकार का व्यक्तित्व निखिल होता है। यही है उसकी कला और विचार का शान होता है। जिस पुस्तक किसी कौशिक की आवश्यकता या भावमुद्राओं के उसके व्यक्तित्व की बड़ी मिल जाती है, उसी तरह कैली से कलाकार की वास्तविकता सामने का जाता है। कैली के समान्य में यह कहा जाता है कि काल्पनिक या नाटक का कैलीमत तत्त्व मनोगत भावों को भूमिका निभाते हैं। कैली शाश्वत के साथ-साथ उसे भावसृंखला को भी दिखाती रहती है। मदुरक कैली के अभाव में भावों के लिए भाव का सांदर्भिक उपयोग होता है। कैली दृष्टि के कौशिक भाव में जिन्दगी अर्थभाव, और सांदर्भिक तत्त्व इन दोनों का समावेश होता है। इन दोनों का समान्य दृष्टि का पुरी भाव एवं व्यक्तित्व से रहता है।

पारंपारिक वजन के पुरस्कृत विचारक अरसु के कैली में दो गुण गुप्त-  

1. प्रसाद [स्पष्टता]
2. आंशिकता

आंशिकता की आंशिकता पुनर्लेखन तथा कैली के भी माना है। भारतीय साहित्य में भी उपयुक्त दो मुख्य विचार रहते हैं। इन गुणों के कारकित अरसु के कैली में चार पुस्तक के दोष भी ज्ञात हैं, जैसे -

1. समानता का आश्चर्य।
2. अच्छी शब्द का प्रयोग।
3. दीर्घ अनुभव तथा अंशिक विचार का प्रयोग।
4. दुर्लभ तथा अनुभव वर्ग का प्रयोग।

1. दुर्लभता: अरसु का सार्वजनिक सन्न डाटा नौकरी - पृ 147-48
शैली के वस्तुमाल और व्यक्तिगत के मैद दक्षिणकाला रिहाना ने भी रिहाना की है। इन दोनों के मैद की आधार और वातावरण का जल्द होता है। आधार वस्तु में रचना की व्यक्तिगत मानवतार्किक रूप से वातावरण में अक्षर गुण आदि की स्थिति रहती है। इन दोनों में समुद्र से रक्षा आवश्यक होता है।

पहले भी हम कह चाहे हैं वह संस्कृत साहित्य में शैली की समानता रखने वाले कई शब्द मिलते हैं, जैसे - रीति, और, मार्ग आदि। इनके द्वारा ऐसा ज्ञान अन्यथा नहीं जाना जाता। रीति समुद्र दाय के पुनिः पुनिः वाचार वामन रीति की परिभाषा दश पुकार करते हैं, जैसे -

विशिष्ट पदरकन रीति।

अथवा - विशेष पुकार के पदों की रचना रीति है। काव्य में इसे महत्त्व पूर्ण मानते हुए आचार्य वामन तो इस काव्य की आलाप तक मानते हैं। जैसे- रीतिरामाक्षाक्षार। रीति का केवल कहते ही विशिष्ट है। इसमें हम सह, गुण, अक्षर, वोचित्य, कुलालित आदि को मालूम करते हैं, जैसे हम इस पुकार है। भी कह सकते हैं कि रीति में उन सभी तत्त्वों का समावेश हो जाता है, जो शैली के वस्तुमाल के अन्तर्रूप हैं। किंतु शैली के व्यक्तिगत का रीति में अनुमान के रूप में भी भी विशिष्ट पदरकन नहीं हैं। आचार्य बीताराम चुड़ौदी के मत है कि रीति और शैली में विशिष्ट अंतर नहीं है कि रीति का काव्य रचना का दुर्ग है और शैली है भावात्मक अभिव्यक्ति की गुणात्मक। शैली वातावरण में उस साधन का नाम है जो बाणी की अभिव्यक्ति में अभिव्यक्ति और सम्पूर्ण काल का संबंध करै। रीति की काव्य की आलाप मानने वाले आचार्य वामन ने पदों के विशिष्ट पदरकन की रीति माना है। इस पुकार शैली और रीति दोनों भिन्न-भिन्न हैं। डा। है न मे भी शैली और रीति की परिवार नहीं माना है किंतु डा। नौतने को काव्यालेक्षणकृतिक की भूमि का मत का जोरदार शब्दों में अपना किया है। वास्तव दुष्टिहोणी व आचार्यों के मतों को सम्पूर्ण ला लेते हैं पर यही पुरातर होता है कि रीति।

1. वामन: काव्यालेक्षणकृतिक - 1/2/26
2. इतिहास: सीताराम चुडौदी: समीक्षात्सत्स - पृ 558
3. डा। नौतन: काव्यालेक्षण की भूमि - पृ 56
को शेली का पर्याय मानने में कोई बाधा नहीं है। आधुनिक बाल में दोनों को पर्याय भी माना जाने लगा है।

शेली में वस्तुतः और व्यक्तित्व के अतिरिक्त भाव भी है। भाव और शेली यथापि दोनों एक दूसरे से पृथक पुनर्जीवन होते हैं, तथापि दोनों का चालक दो सहयोग से संबंद्ध होता है। भाव ही शेली का भौतिक फल है। जिसका निवेदन किया जिन्हे शेली का निवेदन अद्वैत समझा जाता है। आध्यात्मिकता ने अपने समीक्षाकारों में शेली के चार पक्ष मानने हैं। जैसे -

1. अनौपचारिक - उसमें अनौपचारिक की छटा होती है।
2. वादविक - उसमें वादविक का ढंग का अनूठावन होता है।
3. समाधिन्यक - उसमें यथार्थ बात दुसरों की यात्री है समर्थने से समाधान जाती है।
4. गुणवत्ता - विशेष गुणवत्ता के माध्यम से उसमें कथन किया जाता है।

भाषा के बालाशक के शेली मैद से विद्युत नहीं हैं उनका कहना है कि यह मैद अणुण्ड व अस्त्यक के, व्यापक हन मैदों में रस, क्षणिक, ज्योतिष, गुण, और विशिष्ट श्रद्धा तरसों का अन्तर्भाव नहीं किया जा सकता है। आध्यात्मिकता ने वातावरणकालिकों के आधार पर शेली के हैं: गुणा बताये हैं, जैसे -

1. सरलता
2. स्पष्टता
3. सत्यता
4. प्रभावपूर्वकता
5. शिष्टता
6. लालचता

भारतीय आधारों के मुख्य क्षेत्र से कोई के लिए पूर्ण मानने हैं, जैसे -

1. बोध
2. पुलाल
3. माधुर्य

------------------------------------------

1. वाॅखेड़ी: समीक्षावाद - पृ० 567
इसी आदर पर हमें गौरी, वेदना और परमाणु नाम दिया है। विस्तृत रूप से इन गुणों के दस भेद कहे गए हैं। ते हम प्रकार हैं -

1. बीज, 2. पुष्पाद, 3. राशि, 4. समल, 5. सामाधि, 6. मातु, 7. सौंपकार, 8. उदारता, 9. स्त्रियाधिकृति, 10. कारिता।

इस प्रकार यशोदरा पर दुबिये करने के फलस्वरूप जब सम दीक्षित जी की नाटकी को देखते है तो पत्ते हैं कि वे शैली के एक विशेषता कलावर हैं। अपने नाटकों की शैली की दृष्टि से इतना सरल और सुविधा बनाना है कि आर्थ की प्रतीति सबक धी ही हो जाती है। शेषीयों के मधुर में न पड़कर उन्होंने अपने नाटकों के पुनर्वाक्य बनाया रखा। शैली में जो गुण आचार्य हुरूकी ने गिनाये उन्हें एक दीक्षित जी के नाटकों के सहाय की पत्ते हैं तो उनकी दस्तक शैली का ही एकमात्र है। उनका नाटक दृश्य भूमि निकार उसे सुलभित होता है। आक्षेप ा को लागत करने के लिए उन्होंने मुख्यतः, उदारता, स्वीकार्य, उदारता का सुवर्ण को उद्योग स्वीकार है। उनकी शैली के अनुसार उदाहरण एवं भावा के गुणण में है आप हैं। इसी शैली में सरायमुख, समाधिमुख, विययमुख है साथ स्वयमुख भी है। आक्षेप योजना को शैलीगत दोषों के बायाँ का इन्होंने मुख्य पूर्ण करते है। इस प्रकार दीक्षित की एक तुल्य कोर तत्क शैली के लिए शिक्षा है। उन्होंने भावा के समाधि अपने दृष्टि का सत्के बनाया बनाया का बदला है क्योंकि वे समाधि राजमहाक का सत्के है जब तक अस्तित्व अवधार के सकता है। भाषागत साहित्य- प्राचीन में पुनर्वर्तित वेदना रीति का सत्के द्वारा नामित है उनके नाटकों में पुष्करण मिलता है। इस प्रकार उनके कौशल का सत्के का नाम दिया जा सकता है।

***********************

1. कविताकाल : साहित्यकाल - 9/2
2. शामिल : कविताकालसंकलन - 5/1/4
हस्तृत के काश्यप में वाणिज्य छन्दों का प्रयोग विशेष मात्रा में मिलता है। दीक्षित जी ने अपने नाटकों में मुख्यतः से वही लेखन का उपयोग किया है। अपने नाटकों में दीक्षित जी ने उन्नीस छन्दों का प्रयोग किया है, जैसे -

लक्ल प्रयोग मिलता है। इस प्रकार 688 प्रयोग छन्दों के व 16 प्रयोग गतिक के मिलते हैं। अब तभि छन्दों के कुम से दीक्षित जी के लाभकार में उन्हें नियम प्रकार से देखते हैं।

### 1. अनुवाद छन्द

<table>
<thead>
<tr>
<th>वीरपुताप नाटक</th>
<th>39 छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>वीरपुताप-वीरारजिक नाटक</td>
<td>46 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>शकरविर नाटक</td>
<td>50 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>भारतविश्व नाटक</td>
<td>63 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>शारदिक नाटक</td>
<td>21 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>भक्तदुष्कर्ण नाटक</td>
<td>51 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>भूभारोदकरणां नाटक</td>
<td>29 छन्द</td>
</tr>
</tbody>
</table>

योग : 299 छन्द

### 2. शालिकी छन्द

<table>
<thead>
<tr>
<th>वीरपुताप नाटक</th>
<th>1 छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>वीरपुताप-वीरारजिक नाटक</td>
<td>1 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>भारतविश्व नाटक</td>
<td>1 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>शकरविर नाटक</td>
<td>8 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>भक्तदुष्कर्ण नाटक</td>
<td>1 छन्द</td>
</tr>
</tbody>
</table>

योग : 12 छन्द

### 3. संप्रसंध छन्द

<table>
<thead>
<tr>
<th>वीरपुताप नाटक</th>
<th>4 छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>शकरविर नाटक</td>
<td>6 छन्द</td>
</tr>
<tr>
<td>भूभारोदकरणां</td>
<td>2 छन्द</td>
</tr>
</tbody>
</table>

योग : 12 छन्द
<table>
<thead>
<tr>
<th>नंबर</th>
<th>नाटक</th>
<th>छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1.</td>
<td>वीरमणा नाटक</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>2.</td>
<td>वीरमणा-वीराजविलास नाटक</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>3.</td>
<td>शैलशिवाजी नाटक</td>
<td>8</td>
</tr>
</tbody>
</table>

युग : 12

<table>
<thead>
<tr>
<th>नंबर</th>
<th>नाटक</th>
<th>छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1.</td>
<td>भारतविक्रम नाटक</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>2.</td>
<td>शैलशिवाजी नाटक</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

युग : 3

<table>
<thead>
<tr>
<th>नंबर</th>
<th>नाटक</th>
<th>छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1.</td>
<td>शैलशिवाजी नाटक</td>
<td>1</td>
</tr>
</tbody>
</table>

युग : 1

<table>
<thead>
<tr>
<th>नंबर</th>
<th>नाटक</th>
<th>छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1.</td>
<td>वीरमणा-वीराजविलास नाटक</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>2.</td>
<td>भक्तिचन्द्र नाटक</td>
<td>3</td>
</tr>
</tbody>
</table>

युग : 5

<table>
<thead>
<tr>
<th>नंबर</th>
<th>नाटक</th>
<th>छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1.</td>
<td>वीरमणा नाटक</td>
<td>41</td>
</tr>
<tr>
<td>2.</td>
<td>वीरमणा-वीराजविलास नाटक</td>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>3.</td>
<td>भारतविक्रम नाटक</td>
<td>28</td>
</tr>
<tr>
<td>4.</td>
<td>शैलशिवाजी नाटक</td>
<td>19</td>
</tr>
<tr>
<td>5.</td>
<td>भक्तिचन्द्र नाटक</td>
<td>11</td>
</tr>
<tr>
<td>6.</td>
<td>भुभारारोहणात्रु नाटक</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

युग : 104
9. तौतक छन्द

10. वीरपुराण नाटक

1. छन्द

प्रेम : 1°

10. व्यवस्थितका छन्द

10. वीरपुराण नाटक

13. छन्द

20. वीररूपवैराजकविता काव्य नाटक

5°

30. भारतकविता नाटक

9°

40. शर्कराविक नाटक

5°

50. भक्तमुद्रण नाटक

8°

60. भुक्ताराधणाय नाटक

2°

प्रेम : 42°

11. सिोदता छन्द

10. भारतकविता नाटक

2. छन्द

1°

10. शैरयाविक नाटक

2°

प्रेम : 3°

12. मालिनी छन्द

10. वीरपुराण नाटक

4. छन्द

20. भारतकविता नाटक

1°

30. भुक्ताराधणाय नाटक

1°

प्रेम : 6°

13. वीरपुराण छन्द

10. वीरपुराण नाटक

3. छन्द

20. भक्तमुद्रण नाटक

1°

प्रेम : 4°
14. वन्द्राड़ान्ता छन्द

1. वीरचुतानाथ नाटक

गोगः  

15. भिन्नरिणी छन्द

1. बंधुक्रिया नाटक

गोगः  

16. पुख्ती छन्द

1. भारतकिक्रम नाटक

गोगः  

17. अविलिक्रियित्त छन्द

1. वीरचुतानाथ नाटक
2. वीरचुतानाथवीराजविजयानाथ नाटक
3. भारतकिक्रम नाटक
4. गाजिकिक्रम नाटक
5. शंकराक्रिया नाटक
6. भक्तमुद्दरन नाटक
7. भूभारंरोधवायु नाटक

गोगः  

18. भ्रम्बरा छन्द

1. वीरचुतानाथ नाटक
2. भारतकिक्रम नाटक
3. शंकराक्रिया नाटक
4. भक्तमुद्दरन नाटक
5. भूभारंरोधवायु नाटक

गोगः  

19. मुख्य छन्द

19. आदी छन्द

1. वीरगृहताप नाटक
2. भारतकिक्य नाटक
3. शैलरविजय नाटक
4. भूभारबीरसरण नाटक

योग : 6 छन्द

20. गीतिका

1. वीरगृहताप नाटक
2. वीरपुष्कलराजविजय नाटक
3. भारतकिक्य नाटक
4. गांधीकिक्य नाटक
5. भवचंद्रदर्शन नाटक

योग : 16 छन्द

हस पुकार दीक्षित जी ने नाटकों में हमें सबके भीतिक अनुष्ठान छन्द का प्रयोग मिलता है। छन्दों की दृष्टि से सभी नाटकों का सामाजिक भांति में निर्माण के पर हम पाते हैं कि अनुष्ठान छन्द के 299 उदाहरण हैं। उसके पघचलद्य शाल्लुक-रत्नीकिरित छन्द संग्रह की दृष्टि से लिया जा सकता है। यह छन्द की 149 उदाहरण को दीक्षित जी के नाटकों में मिलते हैं। उसके पघचलद्य त्रिनयथ छन्द के 104, वस्तुविक्यका के 42, द्रुभमण के 26, दशकृत के 12, उपस्थित के 12, शालिनी के 6, शालि के 6, हनुमंडा के 5, पंक्तिवर ते 4, उपजयति के 3, रघुवंश के 3, उपरवीरविनिक का 1, मन्दाकान्त का 1, अरित्विजय का 1, पवन्ति का 1, तथा तौर का 1, बार पुरुष किया गया है। इस उपलब्धि छन्दों के अतिरिक्त दीक्षित जी के नाटकों में 16 गीतिकार हैं। गीतिकारों का पुरुष नाटककार का नक्वीन है परन्तु सर्वथा नहीं। दीक्षित जी के पूर्व भी संस्कृत नाटककारों के गीतिकारों का पुरुष किया है।
यह पुस्तक गैयमुधान गीतिकाव्यों की दीर्घता जी ने अपने नाटकों में इस दृष्टि-कोण से व्याख्यान दिया है कि गैयमुधान गीतिकाव्यों का भी अपना महत्त्व है। इन गीतिकाव्यों के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि नाटककार ने इनका पुस्तक भविष्यभावना से अलग किया है। भाविलोकन भविष्य अपने भविष्यभाव भी लगा का अलग व्याख्या रखता है।

भाविलोकन चेरी ठाकुर सुमिततिलक ने कुदरतिलक निम्नलिखित निम्नलिखित निम्नलिखित निम्नलिखित को व्याख्या करते हुए दीर्घता जी ने हन्द्रों के धार्मिक पर विशेष ध्यान दिया है। जहां कथा-कथा को अपने गति देते हैं और भीम में कार्य करना होता है वहां दीर्घता जी ने अनुमोद्दीय हन्द्र का व्याख्या किया है। भावालक कार्यों के पुस्तक में शादिति-कुदरतिलक हन्द्र का तथा धीरजा या धीरबाबू के पुस्तक में कार्यतिलक का पुस्तक किया है। भूगर्भीय के पुस्तक में नाटककार ने धीरजा हन्द्र की अपनाया है। यही प्रत्येक अन्य व्याख्या है कि दीर्घता जी के नाटकों में विशेष ध्यान हन्द्र के सफल पुस्तक को देखकर हमें उनका धन्यवाद का धार्मिक श्राव विस्तृत मिलता है। जहां केसर उल्लेख था, वही हन्द्र में नाटककार ने रचना की है। उनके विशेषतिलक योजनाओं के देखकर हम निश्चित हैं कि धीरजा जी के लिए हमें उन्होंने कहीं भी भावों का गला नहीं घोंटा। वह भी दीर्घता जी की विशेषता ही कही बायजी कि पादरी ने लिए सशक्त का मन है सम पुस्तक किया है। इसलिए में लाहौर ने दीर्घता जी की योजना वह सुझाव देता है कि कहीं भी हमें हन्द्र परी-क्षण के लिए धन्यवाद के अववाद निम्नलिखित का लाभ दिना शुभ शुभ शुभ शुभ। इस पुस्तक दीर्घता जी की धीरजा जी का सफलता है। तो लेखक के लिए सूचिया का उल्लेख भी किया जा रहा है।
<table>
<thead>
<tr>
<th>दैर</th>
<th>अस्त्र माया</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>2,3,4,7,8</td>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>11,22,23,26,28,29</td>
<td>7</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>6,15</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>3,4,5,7,14,17,18,20,23,28,30</td>
<td>11</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>4,8,20,23,24,30,31,32,33</td>
<td>9</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>8,15</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>2,14,16</td>
<td>3</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>कीर्ति-कीर्तिविकल्य नाटक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>शक्तिविकल्य नाटक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>शैक्षिकयोग</td>
</tr>
<tr>
<td>---</td>
</tr>
<tr>
<td>4.5</td>
</tr>
<tr>
<td>5.6</td>
</tr>
<tr>
<td>6.7</td>
</tr>
</tbody>
</table>

| भारतविजय नाटक |
|---|---|
| 1. | 2, 3, 5, 6, 9, 11, 14, 18, 19, 20 | 10 |
| 2. | 1, 5, 10, 11, 14, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 26, 28 | 15 |
| 3. | 5, 8, 11, 12, 13 | 5 |
| 4. | 6, 7, 10, 12, 15, 19, 21, 24 | 8 |
| 5. | 1, 3, 5, 6, 9, 14, 15, 16, 17 | 9 |
| 6. | 3, 4, 6, 7, 11, 12, 13, 15, 16, 17 | 10 |
| 7. | 2, 10, 11, 12, 14, 15 | 6 |

| गाणितिकय नाटक |
|---|---|
| 1. | 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 | 7 |
| 2. | 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14 | 14 |

| भवतुद्वर्धीन नाटक |
|---|---|
| 1. | 2, 4, 5, 6, 7, 9, 10, 11, 17 | 9 |
| 2. | 1, 3, 5, 6, 9, 11, 13, 14, 17, 18, 19, 20 | 12 |
| 3. | 8, 11, 13, 14, 15 | 4 |
भक्तिदर्शन नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>लेखक सूची</th>
<th>यौग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>4</td>
<td>2, 3, 4, 5, 7, 9, 10, 11, 13, 16</td>
<td>10</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>2, 3, 6, 7, 8, 11, 14, 15, 17, 18</td>
<td>10</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>1, 2, 7, 9, 10, 13</td>
<td>6</td>
</tr>
</tbody>
</table>

भूभारोदरणाथ नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>लेखक सूची</th>
<th>यौग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>2, 3, 4, 5, 7, 8, 9, 10</td>
<td>7</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>2, 4, 5, 7, 8, 9, 11, 12</td>
<td>8</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>1, 2, 3, 5, 8, 9</td>
<td>6</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>3, 5, 6, 8</td>
<td>4</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>1, 3, 5, 7</td>
<td>4</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल यौग : 299

२० शालिनी छन्द

वीरसुताप नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>लेखक सूची</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>5</td>
<td>35</td>
</tr>
</tbody>
</table>

वीरसवर्मीराजविवाह नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>लेखक सूची</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>5</td>
<td>1</td>
</tr>
</tbody>
</table>

शैरशिवलिङ्ग नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>लेखक सूची</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>2</td>
<td>4, 5, 6, 9</td>
</tr>
<tr>
<td>शैलीविधि नाटक</td>
<td>योग</td>
</tr>
<tr>
<td>----------------</td>
<td>-----</td>
</tr>
<tr>
<td>3.</td>
<td>13, 14</td>
</tr>
<tr>
<td>4.</td>
<td>4, 15</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>8</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>भारतविधि नाटक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>भवतुलबाण नाटक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>कुल योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>12</td>
</tr>
</tbody>
</table>

| 30 वन्दनका छन्द |

<table>
<thead>
<tr>
<th>वीरप्रताप नाटक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>14</td>
</tr>
<tr>
<td>12</td>
</tr>
<tr>
<td>34</td>
</tr>
<tr>
<td>13</td>
</tr>
<tr>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>शैलीविधि नाटक</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>2.</td>
</tr>
<tr>
<td>3.</td>
</tr>
<tr>
<td>6.</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
</tr>
<tr>
<td>तत्व</td>
</tr>
<tr>
<td>--------</td>
</tr>
<tr>
<td>40</td>
</tr>
<tr>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>10</td>
</tr>
<tr>
<td>50</td>
</tr>
<tr>
<td>30</td>
</tr>
<tr>
<td>40</td>
</tr>
<tr>
<td>60</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग : 12
<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>ग्रंथ नाम</th>
<th>पृष्ठ</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>5.</td>
<td>उपजाति छन्द</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>कौशलचिन्तन नाटक</td>
<td>22, 23</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>भारलविजय नाटक</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>6.</td>
<td>दुलिविलिमिक्खल छन्द</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>कौशलचिन्तन नाटक</td>
<td>20</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>7.</td>
<td>दन्तुमीरा छन्द</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वीरपुर्व-वीराज-विक्रम नाटक</td>
<td>25</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>8</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td></td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>भक्तलंगर्न नाटक</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>16</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td></td>
<td>4, 12</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग: 5
8. वीरस्थङ्ग छन्द

वीरवृत्ताप नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>लेख</th>
<th>गलौिक संख्या</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>10, 11, 12, 13, 15, 16, 18</td>
<td>7</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>2, 3, 14, 16, 20, 21, 24, 25</td>
<td>8</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>1, 2, 4, 13</td>
<td>4</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>7, 10, 11, 21, 32, 36</td>
<td>6</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>3, 6, 7, 16, 17, 21, 28, 29</td>
<td>8</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>1, 16, 18, 21, 22</td>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>6, 7, 8</td>
<td>3</td>
</tr>
</tbody>
</table>

वीरपुष्पकीरवराजविवज नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>लेख</th>
<th>गलौिक संख्या</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>4</td>
<td>3, 4</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>9</td>
<td>1</td>
</tr>
</tbody>
</table>

भारतविवज नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>लेख</th>
<th>गलौिक संख्या</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>7, 8, 15, 16</td>
<td>4</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>2, 4, 7, 9, 12, 15, 16, 27</td>
<td>8</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>6</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>11, 16, 17, 20, 23</td>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>12</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>2, 9</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>3, 4, 5, 6, 7, 8, 9</td>
<td>7</td>
</tr>
<tr>
<td>वैकालिक नाटक</td>
<td>योग</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>---------</td>
<td>-----</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>१०, ५</td>
<td>२</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>१, १०, २०, ३५</td>
<td>४</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>२, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १३, १६</td>
<td>९</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>९, १०, १८</td>
<td>३</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>१७</td>
<td>१</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>१९</td>
<td></td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>भवत्तुद्वर्ण नाटक</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>१०, १४, १५</td>
<td>२</td>
</tr>
<tr>
<td>७, ८, १२</td>
<td>३</td>
</tr>
<tr>
<td>६, १२</td>
<td>२</td>
</tr>
<tr>
<td>८, १०, १९</td>
<td>३</td>
</tr>
<tr>
<td>४</td>
<td>१</td>
</tr>
<tr>
<td>११</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>भृगुराजरण्यु नाटक</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>२, ४</td>
<td>२</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग : १०४

<table>
<thead>
<tr>
<th>नौटक छन्द</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>१०</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग : १
10: कान्तिका उन्नद

वीरसुताप नाटक

1. 10
2. 4, 9, 30
3. 5
4. 19
5. 5, 13, 14, 34
6. 3
7. 4, 5

योग
1
3
1
1
1
4
1
2
13

वीरसुह-वीरालिक्वन नाटक

1. 37
2. 2, 3
3. 11
4. 3

योग
1
2
1
1
5

भारलिक्वन नाटक

1. 13
2. 3, 8
3. 14
4. 1
5. 8
6. 8, 10

योग
1
3
1
1
1
2
9
<table>
<thead>
<tr>
<th>कोड</th>
<th>लोक संख्या</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>2</td>
<td>7</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>3, 4</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>4, 21</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>कोड</th>
<th>लोक संख्या</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>10</td>
<td>13</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>7, 9</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>6, 12</td>
<td>2</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>16</td>
<td>1</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>5, 6</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>कोड</th>
<th>लोक संख्या</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>10</td>
<td>9</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>6</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग: 42

11° सत्यवादिता छन्द

<table>
<thead>
<tr>
<th>कोड</th>
<th>लोक संख्या</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>3</td>
<td>1, 3</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग: 2

<table>
<thead>
<tr>
<th>कोड</th>
<th>लोक संख्या</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>10</td>
<td>5</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग: 5
12. शालिनी छन्द

कौशुक नाटक

---

५

5, 10, 27

६

9,

भारतबिभाजन नाटक

---

५

11

भूरारोहरणाध्य नाटक

---

२

3

कुल योग: 6

13. पौवामार छन्द

कौशुक नाटक

---

१

21, 22, 23

भक्तीदर्शन नाटक

---

४

14

कुल योग: 4
14. मन्दाकिनी कथा छंद

प्रीतसत्क नाटक

20

15. शिवरिणी छंद

श्वेतविजय नाटक

30

16. पुष्युय छंद

भारतकिय नाटक

30

17. वाराणसीक्रृति छंद

प्रीतसत्क नाटक

10 1, 6, 9, 24, 25, 26
20 1, 6, 8, 10, 15, 17, 19, 27, 29
30 3, 9, 10
40 8, 9, 12, 13, 15, 16, 22, 25, 26, 31, 33, 35, 37
50 2, 9, 12, 18, 22, 26

गुल योग: 1
वीरपुत्र नाटक

---

कृति

---

लोक संख्या

---

8

3

49

वीरपुत्र-वीराधिकार नाटक

---

1.

1, 6, 8, 10, 12, 13, 20

7

3.

4, 6, 8, 9

4

वीरपुत्र-वीराधिकार नाटक

---

1.

1, 4, 10, 12, 17

5

3.

13

1

4.

4, 7, 9, 16

4

भारतविख्यार नाटक

---

2.

3, 4, 5, 8, 9, 13, 14, 18, 22

9

5.

4, 6, 13, 18

4

5.

5, 14, 18

3

7.

13, 16, 17

3

क्षेत्रविख्यार नाटक

---

1.

1, 3, 8, 11, 13, 14

6

2.

21

1
### कॅरिगियल नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>सूची लिखिता</th>
<th>वैण्ड</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>3</td>
<td>2, 17, 37</td>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>1, 12, 17</td>
<td>3</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>7, 11, 15, 17, 24</td>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>2, 3, 4, 11, 13, 19, 21, 22</td>
<td>8</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### गार्थिक्क नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>सूची लिखिता</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>1, 5</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>15, 16</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### भूकललुदर्शि नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>सूची लिखिता</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>1, 3, 9, 12</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>4</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>10</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>1, 15</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>1, 13</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>2, 15, 16</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### भूलूराइवृक्षा नाटक

<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>सूची लिखिता</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>1, 6</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>1, 10</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>7</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>7</td>
</tr>
</tbody>
</table>
### मूलधर्मणार्य नाटक

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 50 | 1, 8, 9, 10 |

**कुल गोष्ट : 149**

### 18-विन्यास वहन

| वीरधर्मणार्य नाटक | 
|---|---|
| 10 | 17, 19 |
| 30 | 8, 12, 14 |
| 40 | 1, 2, 24, 27, 29 |
| 50 | 15, 19, 25 |

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 2 | 5 |
| 3 | 3 |

- 13

### भाषत्ततिविविध नाटक

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 30 | 2, 10 |

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 2 | 2 |

### शौचालय नाटक

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 30 | 7, 8 |
| 50 | 3, 5 |
| 60 | 14, 15 |

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 2 | 2 |

### भवलशाली नाटक

| प्रति पंक्ति | 
|---|---|
| 20 | 2, 15 |

<p>| प्रति पंक्ति |
|---|---|
| 2 | 2 |</p>
<table>
<thead>
<tr>
<th>नाटक</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>भविष्यचक्र नाटक</td>
<td>4.8.1</td>
</tr>
<tr>
<td>भूभारोदरणाथ नाटक</td>
<td>3.4.1</td>
</tr>
<tr>
<td>भूभारोदरणाथ नाटक</td>
<td>5.4</td>
</tr>
</tbody>
</table>

कुल योग : 26
<table>
<thead>
<tr>
<th>अंक</th>
<th>श्रेणी</th>
<th>योग</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>20</td>
<td>गीतिका</td>
<td>[लेख]</td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वीरसुधाम नाटक</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>गीतिका संहिता</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td></td>
<td>7</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>10, 11, 12, 13, 15</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>वीरसुधाम-वीरराजविजय नाटक</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>15</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>भारतविजय नाटक</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>10</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>10</td>
<td>गार्डिकिलय नाटक</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>3</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>भालुकबर्मन नाटक</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td></td>
<td>1, 2, 3, 4, 5</td>
<td>5</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>11, 12</td>
<td>2</td>
</tr>
</tbody>
</table>

**सुलङ्ग** : 16
कैलार योजना

कैलार शब्द का सामान्य अर्थ है आभूषण। कैलार सौन्दर्यकारक साथ। शौभा को क्षुद्राने के भारण को काव्य में कैलार व लोक में शामूकता के नाम से लाना जाता है। कैलार शब्द का स्वरूपण की दृष्टि से व्यापक संपूर्णता एवं रूपांतरण का महत्व है। कैलार शब्द के लगभग समानांतर से वापसी की होने के लिए इस पुस्तक के छोटे-छोटे खण्ड में शामूकता के लिए विभिन्न उपाय दिए गए हैं। कैलार का सामान्य अर्थ से शामूकता के लिए किसी कामिनी के आकार की शौभा कहलाते हैं। तरह तरह किसी-किसी प्रकार के शब्द को क्षुद्राने वाले साधन श्रद्धा एवं शामूकता के लिए कहलाते हैं। इस पुस्तक का शब्द तथा अर्थ सौन्दर्य साहित्य में क्षुद्राने वाले साधन के लिए कहलाता है।

कैलारों के स्वरूप [परिभाषा] के सम्बन्ध में किसी दिवस के साथ शामूकता हारा प्रदत्त कहानियों का उल्लेख इस पुस्तक में करा दिया है।

1. काव्य के शौभाकारक अर्थ है कैलार है।
2. कैलार शब्द अर्थात शामूकता के समान रूप के अर्थ है।
3. शामूकता के समान शौभा में शामूकता लाने वाले, रसादि के उपकारक शब्द के अर्थात अर्थशा को कहा जाता है।
4. गुणा और कैलार चालक है।
5. सौन्दर्य ही कैलार है।

यह पुस्तक उपलब्ध काव्य के हारा प्रदत्त परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्ष लगा काव्य का अर्थ है कि कैलार किसी भी कामों का।

---

1. दण्ड: काव्यार्थ - काव्योसभाकारानु कैलारानु दण्ड लागते हैं। 2/1
2. भ्रमर: काव्ययुक्त - परिकृति तथा सन्तले गमने अपूर्व से।
3. विश्वनाथ: नाट्यशास्त्र - शामूकता योगोरंगीय शैली की।
4. गणेश: व्यापकतिवेक - गुणात्मकारक; वादार्थवेतनतवाद।
5. वांगन: काव्यालक्षणेवनुकृति - सौन्दर्य कैलार!
की शोभा बढ़ाते हैं। इसलिए काव्य की शोभा बढ़ाने वाले तत्त्व अलेक्ट्र हैं। पुनःकारात्मक से सभी तथा अर्थ के गायकसे अलेक्ट्र को रस का उपारक बोधावर्धक हैं। तथ्यो स्वीकार किया है। अलेक्ट्रों को दो मैदाने में विभक्त किया जाता है, जैसे -

10. शब्दालेक्ट्र - शब्दों की शोभा बढ़ाने वाले अलेक्ट्र शब्दालेक्ट्र होते हैं, जैसे - यथा, नन्दुलाम बादिया।

20. अर्थालेक्ट्र - अर्थ की सुन्दरता बढ़ाने वाले अर्थालेक्ट्र के नाम से पुस्तिका है, जैसे - उपमा, लयक, दीपक बादिया।

शब्द और अर्थ की संयुक्त तथा सुन्दरता बढ़ाने वाले उभारलेक्ट्र के नाम से अलेक्ट्र-शास्त्र में जोने जाते हैं। काव्य में शब्दालेक्ट्रों की शोभा अर्थालेक्ट्रों का अधिक महत्त्व है, क्योंकि पाठक, शोकी और वर्तमान-शुद्ध मान्यता की आधुनिक अर्थावर्धक की दृष्टि से अधक्ष ध्यान देते हैं। यही कारण है कि काव्यकृति में शब्दालेक्ट्रों की शोभा अर्थालेक्ट्रों का अधिक महत्त्व है। बाचायसे ने इन अर्थालेक्ट्रों की पाठि सेड़ा में विभिन्न फ़िल्म किया है, जैसे -

30. दास्मुक्क - दन अलेक्ट्रों में उपमयों और उपमाओं के आधार पर समास का गर्भन होता है। उपमा, लयक, दीपक, उत्तेङ्गा, सम्मेलन-आत्मा बादिया अलेक्ट्र इस कोटि में लाते है।

40. चित्ररूपमुक्क - इन अलेक्ट्रों में अर्थ के आधार पर चित्ररूप का गर्भन होता है। इस परिषद में चित्ररूपाभास, चित्रमात्रा, अंगित, विचारमय बादिया अलेक्ट्र बादिया है।

50. दास्मुक्क - इस पुंजार के अलेक्ट्रों में पदार्थों और वस्तुओं के पुष्ट का उल्लेख होता है। कारान्वला, तार, एकादश बादिया अलेक्ट्र इस सीमा में लाते हैं।

60. अन्यतेङ्गमुक्क - इस तरह के अलेक्ट्रों में किसी एक वस्तु या पदार्थ का किसी वस्तु या पदार्थ के साथ सम्बन्धित [रिकॉर्ड] लिखित होता है। इन में काव्यलेख, परिस्थितियों, तद्पर्व बादिया अलेक्ट्र बादिया हैं।
5. सुदर्शनतीतिमूलक - यह पुकार के अर्थकों में स्वतन्त्रता की प्रकाशनता रहती है तथा उसकी ही प्रतीति कराई जाती है। इस कारण से व्याजपन, व्याजसहित, पर्यायोचित, स्वभावजु़ित यादि अर्थक बनाते हैं।

कवि: शब्दालकार

10. अनुदास - अनुदास के समन्वय में आचार्य विवचनाथ का अर्थ है -

अनुदास: शब्दसाधन वेदार्थवैशिष्ट्य स्वरूप यथा।

अर्थात् - स्वरूप की विकल्प होने पर भी जहाँ शब्द है तब अनुदास अर्थक बनाता है वहाँ अनुदास अर्थक होता है। आचार्य विवचनाथ ने अनुदास के पांच नीति गिनाए हैं -

केदारनुसार

कुन्तुनुसार

कूस्तुनुसार

अनुतुनुसार

लाटानुसार

केदारनुसार - केदार चर्चा-काल्पनिक स्वदेशमनुष्ठावक ।

अर्थात् - कंपनों के समानार्थ की एक ही धारा अंक पुकार की समानता होने पर केदारनुसार अर्थक बनाता है, जैसे -

वृद्धाण्वयाणितमन्त्रकाणितम विवचनाथदक्षारकेवधयु।

नृसिद्धाकाल्पकालिकार न्याय के एक धारा प्रभाव मध्यवर्ती ।

वह हलक में "का" एक. "क" "का" "का" आभूषित हेलती है, तत्र तरह यह केदारनुसार अर्थक है।

वृद्धाण्वयुसार - वृद्धकालव लाभमकृत्वाकालनेकथा।

एकत्व सब्दनेत्र वृद्धाण्वया उच्चले ।

<table>
<thead>
<tr>
<th>नं.</th>
<th>विवचनाथ: साहित्यदर्पण</th>
<th>10/3</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>10</td>
<td>वही</td>
<td>10/3</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>दोहक्षित</td>
<td>विवचनाथ: वीरस्वरूप</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>विवचनाथ: साहित्यदर्पण</td>
<td>10/4</td>
</tr>
</tbody>
</table>
र्या त्राँ - अनेक व्याख्यानों की एक पुकार से या अनेक पुकार से या एक कस्तूर की एक ही बार या अनेक बार आवृत्ति होने पर व्यापक प्राप्त होता है, जैसे -

कामीरणांलिखकामगृहसीरासु क्षारिका ।
मनस्य: कैल केक्यास्नुमावापावालाकाष्ठक ॥

पहले उन पदानुवाद के प्रथम वाक में "क" "म" की आवृत्ति है इसलिए अनेक बार तृतीय होने के लिए व्यापक प्राप्त होता है।

शुरुआत - उपर्युक्तवादक स्थाने ताहुदादाति ॥

सादृश्य व्याख्यानों शुरुआत उच्चि ॥

र्या त्राँ - ताहु, कस्तूर नामित, किसी एक बार से उच्चित कस्तूरों की आवृत्ति होने पर शुरुआत क्षित होता है, जैसे -

हा ता प्रामुख सदीनभुदानु निपतन्ति वैराजिता ।

यहाँ "क" और "म" दोनों एक ही स्थान (शौच) से उच्चित कस्तूरों की आवृत्ति (समानता) है।

उपर्युक्त - व्याख्याने केवल क्षित सहादेन स्वरूप ।

व्याख्यात्मक स्वरूपवादन्यागाः पति तं ॥

र्या त्राँ - पहले स्वर के साथ ही यथास्वर व्याख्यान की आवृत्ति हो तो उपर्युक्त -

प्राप्त होता है, जैसे -

किं स्लेखराजभुमैव हरेम जित्वा, किं भासपि विकरुसामुवेन नयेम जित्वा ।

मानोदतिस्वरूपवादलात हिन्दु, माने जो रैसु गर्वमाल चरनत्व ॥

-----------------------------------------------

1. दीक्षितः वीरयुताण - 2/27
2. दीक्षितः साहित्यक्षेत्र - 10/5
3. दीक्षितः भारतकिवा - 2/13
4. दीक्षितः साहित्यक्षेत्र - 10/6
5. दीक्षितः वीरयुताण - 7/4
पुस्तक शलौक में प्रथम व दितीय चरण के अंत में "हर्वा" तथा तृतीय व चतुर्थ चरण के अंत में "अन्त" की आचूरति है।

2. यमक अलकार

-----------------
सत्येन पुस्माधियाः स्वरङ्गभक्ताः।
क्रुणेन सेवावृत्तिविधक सिंहिकाः।

कार्यादृश शब्द अर्थवाण हो तो भिन्न अर्थ वाले स्वर-वाजन समुदाय की उसी श्रुति से धारणति को यमक नामक अलकार कहते हैं, जैसे -

रै मानसिद्ध! पति मैसिंसिंस विमार्युले।
नीयानुवृत्ति कृतिनरन धनं कियरस्वातु।
मान शिवाय वाण जीवित गोट्य मायाः
लोकास्वदौ दीर्घ जीवित स्वातिन कङ्गु रामेणू।

वहाँ प्रथम चरण में मानसिद्ध के लिए तथा तृतीय चरण में समम्य के लिए
"मान" शब्द का प्रयोग किया गया है।

3. श्लेष्म अलकार [शब्द]

-----------------
प्रिलम्बे: पद्मपेषार्थाय भावाय श्लेष शब्दे।

कार्यादृश् - प्रिलम्ब पदों से अनेक अर्थों का अभिव्यक्त होने पर श्लेष नामक अलकार
होता है, जैसे -

सम्भावनपुनःविद्यामयुःकस्मतो खण्डः: कलानुवंशः।
अन्यत्र भाषार्मगमेतवा वृत्तियता लोकायत सदिश्यं स्तवं।

वहाँ कलानुवंश को भाषक के परिभाषा के साथ भिन्नात्मकों की प्रतीति होती
है। पूर्व अर्थ में काल की सुदर्शन के समान सुदर्शन और भाषक का अर्थ दूर्दर्शन
है। परस्त्रु पूर्व शब्द में "क्र" और दितीय में "रक" का प्रयोग करने पर प्रथम
शब्द का अर्थ दुर्लभतय तथा दितीय का भारतीय अर्थ हो जाता है। शब्दों में

----------------------------------------
1. विख्यानाः: साहित्यवर्णाः - 10/8
2. दीक्षित: वीरुपात - 6/13
3. विख्यानाः: साहित्यदर्पण - 10/11
4. दीक्षित: वीरुपात - 5/17
परिचार के कारण इसे सहभाषेत्य के कोटि में रखा जाएगा।

[[वीर-अधीर]]

40. **उपमा अधीर**

साम्य वाच्यमूलक वाच्यवृत उपमा ह्रद्यः।

अर्थात् - एक वाच्य में दो पदार्थों के वैश्वर्य संबंध साधूष वाच्य को उपमा अर्थात् कहते हैं, तै: - साहित्य में उपमा अर्थात् हेमक में हैं परन्तु दीक्षा जी के नाटकों में कल्पना वैद्यों के उदाहरण मिलते हैं -

पृष्ठोच्चारण - सा पृष्ठोच्चारण यदि सामान्यवाक्य बोधम वाचित्व च।

उपमेय चौपामान भोक्ता वाच्य हरा पुनः।

अर्थात् - सामान्यवाक्य, उपमावाक्य, अपमेय और उपमाने चारों वहाँ वाच्य

हो वहाँ पृष्ठोच्चारण होती है, तै: -

भीमो यहा जरायुष्य तथ त्व्र पाव्ये कारातु।

दुस्क्रेन हर्षमुद्र क्षणमयक न क्षणे।

यहाँ जरायुष्य की मारना सामान्यवाक्य, यथा, तथा वैक्यवाक्य भीम व जरायुष्य उपमान तथा सम्पूर्णान्तद व क्षण दोनों उपमेय है।

लुप्तोपरण - लुप्ता सामान्यवाक्यीदे पक्ष विध वा ह्रद्यः।

अर्थात् - उपमान, अपमेय, उपमावाक्य व सामान्यवाक्य चन्द्रों से किसी एक के या दो के लुप्त हो जाने पर लुप्तोपरण होती है, तै: -

कथा विष्णुकथानां नियुक्तिः रक्षुते मता।

हननी कृत्रिम तत्स्य मिथिक्षे यथार्थानुष्ठ।

10. **विक्रमाधि: साहित्यवृत्तिः - 10/14**
20. भास्कर - 10/15
30. **दीक्षिण: भारतकिरिय - 7/12**
40. **विक्रमाधि: साहित्यकथित - 10/18**
50. **दीक्षिण: वीरसूत्राय - 4/26**
यहां सामान्यतः का लोप है। नामोहाया - नामोहाया पक्षीयमान लहु दूरकोः। करिकु - यहां एक उपमाण के तण्ड उपमाण हो यहां मालोमाण नामक अर्थार होता है। वैसे -

रिहायस यथा दीनाुपविवेकदिनम्। अधिन अतीतरक्षकी विचित्रनाथ हरि। भीमराज वाराहकुलसिन्धुपाली, तदुप्रत सिन्धुकालित्वि मे कविमीनं स केशं।

यहां विनोक, विश्व, भीम उपमाण है व पुत्रक उपमाण है। यह पुत्रक उपमाण माला के लक्ष्य है। इसी तरह उपमा कर्णार के क्षेत्र सभा तुहौं हम दीक्षित हो जो नाटकों में पाते हैं।

5. श्रीक अर्जुन

इन्हें सुपितदारौरी विषय निरस्त हो।

करिकु - निम्नें रजित विषय उपमाण मे स्थित उपमाण के भारोप को लक्ष अर्जुन कहते है। आदर्शों मे लक्ष के तण्ड नेत्र माने है। अपने विभेद नाट-कों मे हम बुध हो उपमाणों के उदाहरण पाते हैं।

विश्वासविवेक - संस्कारविवेक वाक्यविवेक वाइ।

करिकु - विश्वासविवेक शब्दों के माध्यम से यहां उपमाण पर उपमाण का भारोप होता है। वैसे -

रिहायस यथा माक्रमे भुतानवलननिरगुणाद। सम्मुखाभूताभ्यतिः भारती भावि भूले।

1. दीक्षित: कविताभकर्ताव्य - 6/3
2. दृष्टव्य: श्रीरामकथा, 2/18, 2/19, 3/3, -भारतविजय - 7/2
   भारतस्वरूप - 3/7, 5/16, 6/6
3. विचारावयु: साहित्यकार्यार्थ महाराज - 10/26
4. वैक - 10/31
5. दीक्षित: श्रीरामकथा - 1/2 || 6. दीक्षित: भारतविजय - 1/1
यहाँ यशरात शरदों से गजान पर तिमिर व पुष्प में संवाज का बारोप है।
एक देवानवर्तक सांगता कुंजा व किशोर के छिंदे एक देश का निवास किया जाता है तो यहाँ पर यह अकादर होता है, जैसे -

"सर्व राम: भक्तवदाम्बकुंजा सैवेतिका चले।"
यहाँ किशोर के तत्काल पद पर संवाज का बारोप किया गया है।

6• रासिनाय अकादर

विकातमतारोड़े पुजाराथ्यापोगिता।
परिगामो भवेतुवदुनुवांतिकरणो निक्षा।

वर्तम - यहाँ बारोप गदार निवास के रूप से ही प्रसन्नकार्य में उपयोगी है, यहाँ परिनाम अकादर होता है, जैसे -

"स्वतः निवास लड़कियों परिलक्षित, दृष्टवत्ता रोहिति स रोदसे च सर्वाचु पृथिवी विकासमाधि: शाब्दिक विन्यास, इत्यादि विचार विकसिति वनोदम्बारच।"

यहाँ प्रताप की वारसिक विकसित के एकदम बन्धु प्रदत्तियों की सत्यविकारिति उपयोग के स्रोत से ही प्रसन्नकार्य में उपयोगिता कालार्ग्य नहीं है।

7• सन्देह अकादर

सन्देह: प्रकृते-वर्षय संवाज प्रतिभोवित्सत।

वर्तम - कवि की प्रतिभा से यहाँ प्रकृति उपमेय में उपमान का संवाज किया जाता है, यहाँ सन्देह अकादर होता है। यदापि साहिस्यवर्ण में पुष्प, निखचार्ग और निखचार्ग तीन में एक हलके मण्डल हैं तथापि यह संकल्पजी के नाटकों में निखचामाल सन्देह का उदाहरण ही उपलब्ध होता है, जैसे -

"इससे ख़ूफ़ा दिनाकरचारस मनुष्य गयी शैलों संविनयपूर, मुखपूर्वां कायस्तारी मिलित तव भानु पर विलोकयाव्यक्त।"

1• दृष्टिकोण: भारतविरंजन - 1/1
2• विबंधनाय: साहिस्यवर्ण - 10/35
3• वाचन: श्रीदेवनाथ - 5/13
4• विवेकानन्द: साहित्यवर्ण - 10/35
सैन्य से दार्शनिक विश्लेषणमयमयके पुत्रापूरे।
ग्यारियों तथा सुप्रभाव हो भारविशेष स्थिति।
वहां पुत्र के चरणों में यह में तत्काल नेहर कृपया करने वाले पुत्रापूरे वर्ण-राज और दैवत्वीय गृहु का अवंतर है, परन्तु दृष्टियों चरण में स्वायत ता का अन्त
ही जाता है।

8. उल्लेख कर्तवे

कथितः मेनाकु मुहर्नार्थः विक्षणार्थः तथा कवित्वः
एको नेहरादि॒र यस्य उल्लेख उक्तते।

कथास - वातावरण और विक्षण तथा एक वस्तु का अनेक वन से उल्लेख [कर्म] करता, उल्लेख कर्तवे होता है, तथा -

या पुरुषोत्साहको दीपमुद्रायती,
या दार्शनिकरणां दैवानुपदेशः कार्यः
या चारणमयः समुदायमेश्वरविनिष्ठः
या विक्षणोपरिवर्तकचिन्तामणिस्य विक्षण पुत्रापूरे।

यहां भवान्तु विक्षण के चरणों का श्रोता का दीपक, खुश तथा सूर्य के विक्षण।
के लघुकं एक वस्तु का अनेक पुत्रापूरे से उल्लेख किया मना है।

9. उल्लेख कर्तवे

अनेक अग्रेष्ठ नातकोऽपि प्रकृतीं परत्वना।

कथास - किसी प्रस्तुत वस्तु की प्रस्तुत के लघुकं सम्बन्धित करने को उल्लेख कर्तवे कहते हैं। उल्लेख के कर्तव्य के उदाहरण है, अन्य विवेचन
नाटकों में कर्तव्य प्रकृति की पाते हैं, तथा -

1. दीक्षितः वीरपुत्रापूरे - 4/27
2. दीक्षितः साहित्यवर्णार्थ - 10/37
3. यौगिकः वीरपुत्रापूरे - 1/1
4. दीक्षितः साहित्यवर्णार्थ - 10/40
वाच्योपलेखा - जहाँ दव शादिद उल्लेख वाक शब्दों का प्रयोग होता है, वहाँ वाच्योपलेखा होती है, जैसे -

यहू भूजिया भएली सुधिविषया, रतिक्रियाद्वितीयप्रणिणाता।
सुधारुक्षा स्वाभवतु सुमंसनी, सुधामुख्यकुमारेव राजेन्।

यहाँ प्रस्तुत परिचरिका की एवं उल्लेखितावक शब्दों के माध्यम से अपनी उद्देश्यों के लिए सम्बन्धित की गई है। अन्यथा भी।

द्वियोपलेखा - जहाँ क्रिया लघु सम्बन्धित की जाती है, जैसे -

अभावमकामावशेषकाधोराध्यायीर्षणाः
निर्माणान्तुभूमिरेत्वायातुलुम्भाधारितम्।
रावणकुमारविस्मयकारणाः प्रस्तारिका प्रचारकः नातुको युक्तारस्ताः प्रचारिता दर्शी शताध्यं परा॥

यहाँ शास्त्राय और भूमि में दोनों के गंगे बरसाती है नीलावर्ण फेलाने के लिए सम्बन्धित की गई है।

प्रतीक्यानोपलेख - जहाँ दव शादिद उल्लेखावक्त शब्दों का प्रयोग नहीं होता वहाँ प्रतीक्यानोपलेख होती है, जैसे -

यथा: साम्यस्याय विज्ञापनाः स्वरूपाः स्वरूपाः तपस्वीयोऽ
मोक्षस्य पि वराधिकय शिष्यो गाहे तपस्वी।
वानकुमार सुधारुक्ष विशेषकर शास्त्रतथा तपस्विततः
सत्य विशेष चरणार्थाभ्य विशिष्टयो तैत्तिक्यस्य कारणे॥

यहाँ विश्वास के वरणों की समानता के लिए कथितों का लघु नेत्र, मोक्ष होता जहाँ यथार्थवेत्ता पर, वानकुमार विशेषकर शास्त्रों को सम्बन्धित करने की सम्बन्धित का वह आदि शब्दों की सहायता के बिना की गई है।

1. दोकित: वीरुद्धाप - 1/13
2. दृष्टथा: वीरुद्धाप, 2/13, 2/14, 2/17, 3/3, वीरुद्धाप-वीरांजनविविध, 1/6
   भूमारोऽधिकाराः, 1/16
3. दोकित: वीरुद्धाप - 4/26
4. दोकित: वीरुद्धाप-वीरांजनविविध - 1/1
10. अतिवायित अलकार

सिद्धिते अत्यसाध्यात्मातिकायाय अतिवायितिनिगले ।

अर्थात् - अत्यसाध्याय के सिद्ध होने पर अतिवायित नामक अलकार होता है ।

इसके नीचे पै ने से बेकार निःसन्न और यदि ही नाटकों में मिलते हैं -
सम्भव में सम्भव कताना - यहीं,
उसे केवल जीवाणुपूर्वी श्रेणी, कुंजसंपी कुछात्रितनाबले ।
वाणीदेव: परिचित, सिहा: स्वभावात्तिविद विदिन्त न।

यहाँ सम्भव में सम्भव कताना गया है । इसी तरह कन्या भी।

II. दृष्टान्त अलकार

दृष्टान्तस्तु सक्षरित वसुन्ध: प्रतिकृतिविनम्र।

अर्थात् - दो वाक्यों में कर्म सहित उपमानोपमाय के प्रतिकृतिविनम्र को दृष्टान्त
कहते हैं । साधारण व वेदिक दोनों वेदों के उदाहरण हम अपने विवेकचर्चा
नाटकों में पाते हैं । साधारण, जैसे -

अथार्थित चारे निहतोऽपि जनवृ, रक्षौ प्रवाहैव विनिबबर्याते।
निहतां नामबृहु गमे: कर्ष न, परिवत वा दस्यारण महानः।

यहाँ यथार्थवादी और स्वभाव दोनों में सादृश्य के कारण विभागितिकृतिविन्यास है ।
इसी तरह अर्थशास्त्र भी।

वेदिकाओं में - अतिवायित कुथावाद या कार्योः सम्मुखे गमः।
पराक्षेत्रोऽन्य दृष्टान्ता भूता वालोभित कार्यः।

1. विवाक्यार्थ : साहित्यदर्शन - 10/46
2. दोहित्र : भारतकल्याण - 2/9
3. दृष्टान्त - बीरसुपुर्वीराजविंशति, 1/8, बीसारंभ, 2/27, भारतकल्याण,
   1/6, 1/15
4. विवाक्यार्थ : साहित्यदर्शन - 10/91
5. दोहित्र : गीतकल्याण - 4/6
6. दृष्टान्त - भक्तशब्दनित, 1/12, 4/9
7. यहीं - 1/11
यहाँ भारतवासी छाता का सुखावाद और दीर्घ का शुभ में परावर्त दोनों में वैश्वनों द्वारा विलिन्यतिविन्यस्ताय विभाव है। अन्य भी ना...

12. दिनोपिनि: कल्याण

विनोपिनितविनादन नामभवन्याध्यायः

अर्थात् - एक वे बिना बुरे का शोभा व आरोग्य होना जहाँ कालप्रभाव होता है, यहाँ विनोपिनि नामक कल्याण होता है, जैसे -


d्वारस्वमतातिकायः क्राकुपापि स्वामव्याकरण रमणोऽभिषीतः।
sार्थेऽऽतु भोज्याखौऽव भूत्व तद् नाचर्युक्तात्मपुरूषः।

यहाँ स्वामति के बिना भोजन आरोग्य का कारण है।

13. अपासनबालासा अल्पाकार

विनीतिविनादन नामभवन्याध्यायः

कार्यान्माल्याः सामाज्यात्सामाज्याः का चिन्दाः।
कार्याैन्माल्याः कार्य व जेतृशुमातसमायः।

अर्थात् - अपासन सामाज्य से पुरस्त विकृष्ट जहाँ कार्य होता है, वहाँ वह अल्पाकार होता है, जैसे -

भक्तमुननुभमार्ति श्रोतः स्वातिर्चक्षु वचः।
द्वारस्वमतातिकायः दिशि नोदक्षे रचि।

यहाँ परिवर्तन अयस्क न होना, यह सामाज्य पुरस्त है, परन्तु नोदक्षे अयस्क अपासन न होना आश्चर्य का विवेचना है।

---------------------------
1. दुःखदृष्टि - भक्तपुरबाणि, 2/5, 2/8, 4/10
2. विनिवास : साध्विनकर्षणिः - 10/95
3. दोक्षिता : कोरुतापि - 3/8
4. विनिवास : साध्विनकर्षणिः - 10/98
5. दोक्षिता : भारतकवि - 2/24
14. ज्ञानस्तुति अलकार

निन्दास्तुतियोऽथ वाचाय गम्ये स्तुतिनिन्दयोः

वर्षात् - वाचा निन्दा से स्तुति के चर्याय होने पर और वाचा स्तुति से निन्दा
के चर्याय होने पर ज्ञानस्तुति अलकार होता है, जैसे -

पुजायोऽथ नरुमन्त्रणः वरः निन्दास्तुतिः सिद्धियाः सत्तायाः

यहाँ "यदि पुजाना नहीं हो तो युक्त हटा दो" ऐसा वाचय में वाचा निन्दा है,
परन्तु चर्याय स्तुति है कि युक्त सर्वदा के लिए लोक के गमनागमन के चर्या से मुक्त
कर दी

15. वर्तिन्तरयथासैमार

सामान्यः वा निक्षोपयोः वा तदन्त्येन समख्यते

अतः सामान्यतरयथासैमार निक्षोपयोऽतरस्पते

वर्षात् - सामान्य अथवा निक्षोपयो उसके भिन्न है जो समर्थन किया जाता है,
वह वर्तिन्तरयथासैमार है। सामान्य और निक्षोपयो इससे दूसरे के डेढ़ है, जैसे -

पुजानां चित्तादि वाचायस्थववी नायांति लोके कवचस्य
कायायां अतिक्रमिनि हराये पायां चुक्षे स्तुतयो
सार्व्वत्राधिकारिः दुरोदर्मिणि भीमायुगे स्वयम
कार्यायां स निःक्षेपे पिताः तत्तदवेदं संतुष्टयो

यहाँ सामान्यता के अभ्यं विन्दः का कम्मावधारण करने पर भी पूज्याः का पाव बना
पूज्याः करने पर भी युक्तिविधि का कार्यायाः कहलाना, इस सामान्यतिक्षान्त
का समर्थन वाद्यत्री लोगों का चित्रो निन्दनीय नहीं होता, इस विक्षोप कथन
से किया गया है। इस पुत्राः वह निक्षोपयो सामान्य का समर्थन है। अन्यथा भी

10/60
5/19
10/109
2/1
5/29, 6/18, वीरसूक्वातिकिकव, 4/3,
1/16, 6/4, 6/10, 5/1, 5/5
16. काव्यलिपि अलेक्सार

काव्यलिपि हेतु वाक्यव्यवस्थापन

कहा - कहते हैं कि वाक्यव्यवस्था अथवा पदार्थव्यवस्था में कथन करना काव्यलिपि अलेक्सार है, जैसे -

जाताहैं तुम्हारा जन पुरुषगण एक शैली विधि दिव्याकलिस्ती, श्रेष्ठतम अलेक्सार विद्वानों. जन्माधुरा गुप्तमागा.  विश्वसंगम व गृहस्ताः श्रेष्ठतम अलेक्सार. पुरुष भिन्नता सर्व श्रेष्ठ पुरुषमुग्धाः अलेक्सार गुप्तमागा। इत्यादि कथन खक्का तथा कथन अलेक्सार है नाम नर्तक हैः ।

यहाँ पूर्ण तीन चरणों के वाक्यव्यवस्थाओं का अनुरूप चरण हेतु हैः। इसी तरह अन्य भी।

17. विचित्र अलेक्सार

गुप्त तिनों श्रेष्ठतम अलेक्सार विश्व अलेक्सार, जन्माधुरा गुप्तमागा विश्वसंगम व गृहस्ताः विश्वसंगम व गृहस्ताः।

विविधताएँ कहना अथवा विविधताएँ मत्त अलेक्सार होता हैः जैसे -

बधासै पुलापः कवि व विचित्र अलेक्सार. विविधताएँ व विचित्र अलेक्सार. पुलापः कवि व विचित्र अलेक्सार।

बवि वर्ष यदि वृद्धि व ज्ञान, तथापि निदानव्यवस्था न यात्र अलेक्सार।

यहाँ कवि की शक्ति और पुलापः विविधताएँ हारा रक्षित पुलापः और कवि के

1. मम्मत : काव्यबुक्ताः - 10/114
2. दीक्षिता : वीरपुलापः - 1/17
3. दुःखम् - वर्षी - 2/7, 5/1, 3/33, 3/37, 3/38, 3/35, 1/2, 2/7, 2/13, 3/14, 4/5, 5/20, 5/4, 6/14, 2/4, 2/7, 2/14, 2/1, 2/6, 5/8, 5/12, 5/19, 6/3
4. वित्तमान : साहित्यव्यवस्था - 10/70
5. दीक्षित : वीरपुलापः - 6/12
18• अर्पिपन्ति अल्कास

दण्डपुपिका ध्यानरागमो स्थायित्विरिन्यः

अर्थात् - दण्डपुपिका न्याय से दूसरे अर्थ का बान होने पर अर्पिपन्ति अल्कास होता है, जैसे -

यत्वदेव विवेदुं श्रुतिल्वे कष्टिक लिङ्गग्राह्यस्य विचारः।
तत्र का किंवदथा अभलानां तास्तु मानसस्मार्थस्य कथानिः ॥

यहाँ यह सच्चता प्रकट गया है कि वैदिक विषयों पर जिस घर में कदी भी विचार करते हैं, उस घर के लोगों का विचार होना स्वतः सिद्ध है।

19• समुच्य अल्कास

समुच्यों समकर्मित्वेऽक्षरसाक्षेपोऽस्मात्
खो कार्यत्वका न्यायात्मकार्यस्य विशेषः

गुणो दिथये यथा निम्नवर्गतां यथा गुणः ॥

अर्थात् - जहाँ कार्य के साक्षर होने वाले होते हैं तो अर्पिपन्ति अल्कास होता है, जैसे -

वा स्वाधिकारः समस्तविचारः तृतीय विशेषः
स्वं दोषं त्यवाचर्य हास्याश्च कुत्तो भाटीस्य।
किंचार्याभिप्रेतुपुष्पद्वयं वाच ततौ शृणेऽति,
		तास्तेव अनुमोदनः सत्यावलोकितेऽपि शुभः ॥

---------------------------------------------------
1• दुर्लभा - भवतुल्लल, 2/12
2• विष्णुसार : साधित्वर्णण - 10/83
3• दीक्षित : श्रवणविध - 2/3
4• विष्णुसार : साधित्वर्णण - 10/85
5• दीक्षित : भृगुरोहित्वर्ण - 2/1
यहाँ दुर्लभता श्रेष्ठ के एककार्यसाधन होने के पूर्वांग दूसरे कार्यों के साथ के व्य में उन्हीं का कर्नान है। क्षेत्र भी।

20. स्वभाषावौद्धिक अलंकार

स्वभाषावौद्धिकस्विनमात्रविनिमयमनुवर्तन।

अर्थात् 5 कविकार से बालत्व बच्चे आदि की कृतियों या स्वस्ववौद्धिक अलंकार कहते हैं, जैसे –

स्वस्ववौद्धिकमय दुखुवन निनित्सरस। भूमिपुकुड़ रामण परशेश स्वनुकुड़ लगभाष्यति।

यहाँ साम्प्रदायक बालभुवन स्वभाषा का कर्नान है। इसी तरह बनना भी।

21. भाष्कर अलंकार

अवकाशस्त्र पदार्थविही भूतस्थाय भविष्यत।

यतु यतु स्थायिमानात्वं तद्भाषिकमः साम्प्रदायमानः।

अर्थात् – भूत या भविष्यत विही अवकाश पदार्थ का प्रस्तुतविही अनुभव करने पर भाष्कर अलंकार होता है, जैसे –

कैन दृश्यविही भूमिपुड़ वर्णिततिः, वर्णेविगतिः सुयोग्यत्वात्।

अथ दृश्यविही अवकाशस्त्र सहस्यस्त्र रिक्तस्त्र, सोर्व साभिकाः पदेशु पद्नेले भूम्यक्षुपत्त वस्त्राकः।

-----------------------------

2. विश्वनाथ साहित्यदर्शण – 10/13
3. दीक्षित भूभारतविराजय 1/5
4. दृष्ट्यु यही 4/7, वीरपुरुष, 1/20, 1/30, 1/22, 1/23, 2/18, 2/19
5. विश्वनाथ साहित्यदर्शण – 10/94
6. दीक्षित भूभारतविराजय 2/10
यहाँ प्रथम तीन चरणों में कृप्या हारा ज्ञात है कि गण कालों का कारण है। इसी तरह अन्य सिद्ध भी।

22. सूर्यकिंचित कर्मर

सूर्यकिंचित्तेरेन भैदेन विद्य-हसिद्धिः।

अर्थात् - यहाँ दो या उसके अधिक अलंकार परस्पर निर्लेखमात्र से विरूद्ध होते है, यहाँ सूर्यकिंचित कर्मर होता है। भै -

वद्वारसि पुत्राप: कवि च व: पुत्रा: पवि भि१लसा: कवि को हादनामः।

कवि तत्तथ वलन: कवि वमुद्रायन: तथापिनिन्दतिविनाय न गाति ॥

यहाँ पुत्राप: पुत्राप: द्वन दोनां: यथा तथा शेष इलोक में विश्व अलंकार है।

दोनों निर्मणा लघु से विरूद्ध है।

इस पुत्रार दीक्षित जी के नाटकों में हम शब्दालंकारों व अर्थालंकारों का तत्त्व प्रयोग पाते है। शब्दालंकारों में अनुवाद, यथा, व शब्द प्रयोग है। अर्थालंकारों में उपमा, त्वप, परिणाम, सन्देश, उद्धेद, उद्घात, अन्तिकहाणिकण, द्रुपट्टनंत, विवरणिक, अनुसूगसंसूग, व्याजसेविक, धर्मान्तरास्स, काल्पनिक, विक्रम, अर्थात्, समुच्चय, स्वप्नवृत्तिक, भाविक और सूर्यकिंचित कर्मर पाते है। उपमा अलंकार के पुनः में दीक्षित जी के उपमान नुस्त्रित के प्राणी, अर्थात् आदि तत्त्व, राजा, विचार, विचार, जरालंक, कार्यक, व चित्ताकार जहूँ तुच्छ में क्रृतिया की छाया, पर आदि को सिया है, तथा विचारों में उद्धेद प्रयोग में उपमा को उपमान के लघु में सिद्ध है। दुर्लक्षणं, आर्थिक और समुच्चय अलंकारों के पुनः में उपमान के लघु में प्रतिहार विषयात्मक शब्दों को रखा है। इस पुत्रार दीक्षित जी के नाटकों में अलंकारों की सहज व मनोरम विविधता को देखकर हम उच्च अलंकार तात्त्विक विवरण शान्तिविषय का सहज ही अनुमान लगा सकते है। पुनः सभी अलंकार नाटकों की शोभा कटाने में सहायक सिद्ध हुए है।

1. द्रुपट्टनं - भुवारोहिरण्यः, 3/4, 4/2, 5/9, भक्तुद्वर्गिनः, 3/1, 3/2, 3/3, 3/4, 3/5, 4/8, 6/12
2. मण्डतः: कविविनताः - 10/139
3. दीक्षितः: विश्वनारायणः - 6/13